चाणक्य नीति सम्पूर्ण



आशुतोष बंसल

प्रकाशकीय

तदहं संप्रवक्ष्यामि लोकानां हितकाम्यया। येन विज्ञानमात्रेण सर्वज्ञत्वं प्रपद्यते।।

"मैं लोगों की भलाई की इच्छा से (राजनीति के) उन गूढ़ रहस्यों का वर्णन कर रहा हूं, जिन्हें जान लेने मात्र से मनुष्य सर्वज्ञ हो जाता है अर्थात् और कुछ जानना उसके लिए शेष नहीं रह जाता।"

मनसा चिन्तितं कार्यं वाचा नैव प्रकाशयेत्। मन्त्रेण रक्षयेद् गूढं कार्ये चाउपि नियोजयेत्।

मन से सोचे हुए कार्य को वाणी द्वारा प्रकट नहीं करना चाहिए, परंतु मननपूर्वक भली प्रकार सोचते हुए उसकी रक्षा करनी चाहिए और चुप रहते हुए उस सोची हुई बात को कार्यरूप में बदलना चाहिए।

इन्द्रियाणि च संयम्य बकवत् पण्डितो नरः। देशकालबले ज्ञात्वा सर्वकार्याणि साधयेत्।।

बुद्धिमान व्यक्ति को अपनी इन्द्रियों को वश में करके समय के अनुरूप अपनी क्षमता को तौलकर बगुले के समान अपने कार्य को सिद्ध करना चाहिए

परस्परस्य मर्माणि ये भाषन्ते नराधमाः। त एवं विलयं यान्ति वल्मीकोदरसर्पवत्।।

जो लोग एक-दूसरे के भेदों को प्रकट करते हैं, वे उसी प्रकार नष्ट हो जाते हैं जैसे बांबी में फेसकर सांप नष्ट हो जाता है।

"कामंदकीय नीतिसार' में विष्णुगुप्त के लिए ये पंक्तियां लिखी गईं :-

नीतिशास्त्रामृतं धीमानर्थशास्त्र महोदथधेः समुददश्रे नमस्तस्मै विष्णुगुप्ताय वेधसे।।

"जिसने अर्थशास्त्र रूपी महासमुद्र से नीतिशास्त्र रूपी अमृत का दोहन किया, उस महा बुद्धिमान आचार्य विष्णुगुप्त को मेरा नमन है।' जनकल्याण के लिए जो भी जहां से मिला, उसे चाणक्य ने लिया और उसके प्रति कृतज्ञता प्रकट की। वे अपने ग्रंथ का शुभारंभ करते हुए शुक्राचार्य और बृहस्पति दोनों को नमन करते हैं। दोनों गुरु हैं। दोनों की अपनी-अपनी विशिष्ट धाराएं हैं। अपने प्रतिज्ञा वाक्य में वे कहते हैं--

पृथिव्या लाभे पालने च यावन्तार्थ शास्त्राणि पूर्वाचार्यः प्रस्थापितानि संहृत्यैकमिदमर्थशास्त्रं कृतम्।

पृथ्वी की प्राप्ति और उसकी रक्षा के लिए पुरातन आचार्यों ने जिन अर्थशास्त्रविषयक ग्रंथों का निर्माण किया, उन सभी का सार-संकलन कर इस अर्थशास्त्र की रचना की गई है।

अधीत्येदं यथाशास्त्रं नरो जानाति सत्तमः । धर्मोपदेशविख्यातं कार्याकार्य शुभाशुभम्।।

चाणक्य नीति

॥ अथ प्रथमोऽध्यायः पहला अध्याय ॥

1.	प्रणम्य शिरसा विष्णुं त्रैलोक्याधिपतिं प्रभुम् । नाना शास्त्रोद्धृतं वक्ष्ये राजनीतिसमुच्चयम् ।	तीनों लोकों के स्वामी, सर्वशक्तिमान और सर्वव्यापक ईश्वर को प्रणाम कर मैं अनेक शास्त्रों से उधृत करके राजनीति से संबंधित ज्ञान का उत्तम संग्रह इस महाग्रन्थ का कार्य आरम्भ कर रहा हूं। हे प्रभु! मुझे आशीर्वाद दो। प्राचीन परंपरा है कि ग्रंथ की निर्विघ्न समाप्ति के लिए आचार्य चाणक्य ने सर्वशक्तिमान प्रभु विष्णु (अपने आराध्य व पालन कर्ता) को स्मरण "मंगलाचरण" करके इस की रचना की है। विदित हो कि "नीति "का प्रयोजन व्यक्ति और समाज की व्यवस्था देना है।
2.	अधीत्येदं यथाशास्त्रं नरो जानाति उत्तमः। धर्मोपदेशविख्यातं कार्याकार्यं शुभाशुभम् ।।	श्रेष्ठ प्राणि इस ग्रन्थ का विधिवत् अध्ययन करके शास्त्रों में उपदिष्ट कर्त्तव्य- अकर्तव्य, पाप-पुण्य, धर्म-अधर्म को ठीक प्रकार से जानकर अपने जीवन को प्रकाशमान करके ज्ञान प्राप्त करें। यहां यह बात जान लेना भी आवश्यक है कि धर्म और अधर्म क्या है? इसके निर्णय में, प्रथम दृष्टि में धर्म की व्याख्या, लोकाचार और नीतिशास्त्र के अनुसार विशेष परिस्थितियों में पापी का वध और अपराधी को दंड देना, धर्म के विरुद्ध नहीं माना जाता, इसी श्रेणी में आते हैं।

3.	**तदहं सम्प्रवक्ष्यामि लोकानां हितकाम्यया।** **येन विज्ञानमात्रेण सर्वज्ञत्वं प्रपद्यते।।**	मैं लोगों के कल्याण की कामना करते हुए इस राजनीति समुच्य का वर्णन करूंगा। जिसे जानकर मानव सर्वज्ञ हो जाता है। यहां 'सर्वज्ञ' से चाणक्य का अभिप्राय ऐसी बुद्धि प्राप्त करना है जिससे व्यक्ति में समय के अनुरूप प्रत्येक परिस्थिति में, दुनियादारी और राजनीति की बारीकियां समझकर कोई भी निर्णय होने की क्षमता आ आए।
4.	**मूर्खशिष्योपदेशेन दुष्टस्त्रीभरणेन च।** **दुःखितैः सम्प्रयोगेण पण्डितोऽप्यव सीदति।।**	मूर्ख, बुद्धिहीन शिष्यों को उपदेश देने से, दुष्ट-व्यभिचारि नारी का भरण-पोषण करने से (संक्रामक रोगों से ग्रस्त, विषादग्रस्त) तथा दुखी व्यक्ति के साथ संबंध रखने से सज्जन और बुद्धिमान प्राणी भी दुःख ही पाता है।
5.	**दुष्टा भार्या शठं मित्रं भृत्यश्चोत्तरदायकः ।** **ससर्षे च गृहे वासो मृत्युरेव न संशयः।।**	दुष्ट स्वभाव वाली, कठोर वचन बोलने वाली, दुराचारिणी स्त्री और धूर्त, दुष्ट स्वभाव वाला मित्र, सामने बोलने वाला मुंहफट नौकर और ऐसे घर में निवास जहां सांप के होने की संभावना हो, ये सब विश्वास के योग्य नहीं और मृत्यु के समान हैं। इसमें कोई संदेह (संशय) नहीं।
6.	**आपदर्थे धनं रक्षेद्र दारान् रक्षेद्धनैरपि।** **आत्मानं सततं रक्षेद् दारैरपि धनैरपि।।**	बुद्धिमान लोगों के लिए यह जरूरी है कि आपत्तिकाल से बचाव के लिए धन की रक्षा और धन खर्च करके भी स्त्रियों (जीवनसंगिनी) की रक्षा करनी चाहिए, परंतु स्त्रियों और धन से भी अधिक आवश्यक यह है कि व्यक्ति स्वयं की रक्षा करे। यदि व्यक्ति का अपना ही नाश हो गया तो धन और स्त्री का प्रयोजन ही क्या रह जाएगा।

7.	**आपदर्थे धनं रक्षेच्छ्रीयतां कुत आपदः। कदाचिच्चलिता लक्ष्मीः संचितोऽपि विनश्यति।।**	आपत्तिकाल के लिए मनुष्य को धन की रक्षा करनी चाहिए, लेकिन सज्जन पुरुषों के पास विपत्ति का क्या काम। क्योंकि लक्ष्मी तो चंचला है ऐसी स्थिति में वह संचित करने पर भी नष्ट हो जाती है।
8.	**यस्मिन् देशे न सम्मानो न वृत्तिर्न च बान्धवाः। न च विद्याऽगमः कश्चित् तं देशं परिवर्जयेत् ।।**	जिस देश में आदर-सम्मान नहीं और न ही आजीविका का कोई साधन है, जहां कोई बंधु-बांधव, रिश्तेदार भी नहीं तथा किसी प्रकार की विद्या और गुणों की प्राप्ति की संभावना भी नहीं, ऐसे स्थान को छोड़ देना चाहिए।
9.	**श्रोत्रियो धनिकः राजा नदी वैद्यस्तु पञ्चमः। पञ्च यत्र न विद्यन्ते न तत्र दिवसं वसेत् ।।**	जिस देश में धनवान (व्यापार वृद्धि), श्रोत्रिय (वेद को जानने वाला ब्राह्मण धर्म, यज्ञ की रक्षा के लिए), राजा (स्थिर न्याय और शासन-व्यवस्था के लिए), नदी (जल के लिए) वैद्य (रोगों से छुटकारा पाने के लिए) आदि पांच विद्यमान न हों, ऐसे देश में बुद्धिमान को नहीं ठहरना चाहिए।
10.	**लोकयात्रा भयं लज्जा दाक्षिण्यं त्यागशीलता। पञ्च यत्र न विद्यन्ते न कुर्यात् तत्र संस्थितिम् ।।**	जहां जीवन को चलाने के लिए आजीविका का कोई साधन न हो, व्यापार आदि विकसित न हो, किसी प्रकार के दंड के मिलने का भय न हो, लोकलाज न हो, व्यक्तियों में शिष्टता, उदारता, दान देने की प्रवृत्ति न हो, जहां ये पांच चीजें विद्यमान न हों, वहां व्यक्ति को निवास नहीं करना चाहिए।

11.	**जानीयात् प्रेषणे भृत्यान् बान्धवान् व्यसनाऽऽगमे। मित्रं चाऽऽपत्तिकालेषु भार्यां च विभवक्षये।।**	काम के समय नौकर-चाकरों की, दुख आने पर बंधु-बांधवों की, कष्ट आने पर मित्र की तथा धन नाश होने पर अपनी पत्नी की परीक्षा होती है और वास्तविकता का ज्ञान होता है।
12.	**आतुरे व्यसने प्राप्ते दुर्भिक्षे शत्रु-संकटे। राजद्वारे श्मशाने च यस्तिष्ठति स बान्धवः ।**	किसी रोग से पीड़ित होने पर, दुख आने पर, अकाल पड़ने पर, शत्रु की ओर से संकट आने पर, राज सभा में (किसी मुकदमे आदि में फंस जाने पर), श्मशान अथवा किसी की मृत्यु के समय जो व्यक्ति साथ नहीं छोड़ता, वास्तव में वही सच्चा बन्धु माना जाता है।
13.	**यो धुवाणि परित्यज्य अधुवं परिषेवते। ध्रुवाणि तस्य नश्यन्ति अध्रुवं नष्टमेव च।।**	जो मनुष्य निश्चित को छोड़कर अनिश्चित के पीछे भागता है, उसका कार्य या पदार्थ नष्ट हो जाता है। लोभ से ग्रस्त होकर व्यक्ति को हाथ-पांव नहीं मारने चाहिए जो उपलब्ध हो गया है, उसी में सन्तोष करना चाहिए।
14.	**वरयेत कुलजां प्राज्ञो विरूपामपि कन्यकाम् रूपशीलां न नीचस्य विवाहः सदृशे कुलो।।**	बुद्धिमान व्यक्ति को चाहिए कि वह नीच कुल में उत्पन्न हुई सुंदर कन्या से विवाह न करे। श्रेष्ठ कुल में उत्पन्न हुई सौंदर्यहीन कन्या से भी विवाह कर ले, परन्तु विवाह अपने समान कुल में ही करना चाहिए। क्योंकि उनका आचरण, चरित्र अपने कुल के अनुसार होगा ।
15.	**विषादप्यमृतं ग्राह्यमेध्यादपि काञ्चनम्। नीचादप्युत्तमा विद्या स्त्रीरत्नं दुष्कुलादपि।।**	विष में अमृत को, अपवित्र और अशुद्ध पदार्थों में सोने को, नीच मनुष्य से अच्छी शिक्षा, विद्या, कला अथवा गुण को और दुष्ट कुल में उत्पन्न अच्छे गुणों से युक्त नारी रत्न को बिना संकोच के ग्रहण कर लेना चाहिए।

16.	नखीनां च नदीनां च श्रृंगीणां शस्त्रपाणिनाम् । विश्वासौ नैव कर्तव्यः स्त्रीषु राजकुलेषु च।।	बड़े-बड़े नाखून वाले हिंसक प्राणियों का, प्रचंड रूप से तीव्र बहती नदियों का, बड़े-बड़े सींग वाले सांड़ आदि प्राणियों का और शस्त्रधारी लोगों का, स्त्रियों और राजा से संबंधित राजसेवकों और राजकुल के व्यक्तियों का भूलकर भी विश्वास न करें। वे कभी भी आपके लिए प्रतिकूल परिस्थितियां पैदा कर सकते और अहित करवा है।
17.	स्त्रीणां द्विगुणा आहारो बुद्धिस्तासां चतुर्गुणा।साहसं षड्गुणं चैव कामीऽष्टगुणः उच्यते।।	पुरुषों की अपेक्षा नारियों का आवश्यक पौष्टिकता आहार दुगुना (क्षय हुई ऊर्जा को प्राप्त करने के लिए) बुद्धि चौगुनी (लोगों से व्यवहार, छोटी-छोटी बातों को समझने की दृष्टि बुद्धि अधिक पैनी) का विकास, साहस छः गुना (भावना प्रधान होने के कारण, संतान की रक्षा के लिए वे अपने से कई गुना बलशाली के सामने लड़-मरने के लिए डट जाती हैं) और कामवासना आठ गुना बताया गया है।

चाणक्य नीतिः ॥ अथ द्वितीयोऽध्यायः दूसरा अध्याय ॥		
1.	अनृतं साहसं माया मूर्खत्वमतिलुब्धता । अशौचत्वं निर्दयत्वं स्त्रीणां दोषाः स्वभावजाः ।।	झूठ बोलना, साहस, छल, कपटता, मूर्खता, अधिक लालच, अपवित्रता और निर्दयता। यह सब औरतों के स्वाभाविक दोष हैं (इन दोषों को स्त्री की समाज में स्थिति और उसके परिणामस्वरूप बने उनके मनोविज्ञान के संदर्भ में देखना चाहिए) "यत्र नार्यस्तु पूज्यन्ते रमन्ते तत्र देवताः" समाज में सती और ज्ञानवान निष्ठावान स्त्रियों के प्रति सकारात्मक महत्व को दर्शाता है।
2.	भोज्यं भोजनशक्तिश्च रतिशक्तिर्वराङ्गना । विभवो दानशक्तिश्च नाऽल्पस्य तपसः फलम् ।।	भोजन के योग्य पदार्थ और भोजन की शक्ति, सुन्दर नारी और उसे भोगने के लिए शक्ति, विपुल धन और उसके साथ दान देने की भावना। ऐसे संयोग जिस प्राणी में होते हैं, केवल तपस्वी ही हो सकता है। अच्छी जीवन संगिनी, शारीरिक शक्ति, पौरुष एवं निरोगता, धन तथा वक्त-- जरूरत पर उनका सदुपयोग, कठोर श्रम और आत्मसंयम द्वारा ही प्राप्त होते हैं।
3.	यस्य पुत्रो वशीभूतो भार्या छन्दानुगामिनी । विभवे यश्च सन्तुष्टस्तस्य स्वर्ग इहैव हि।।	जिसका बेटा उसके वश में है, पत्नी आज्ञा के अनुसार चलती है, धन से सन्तुष्ट है, ऐसे प्राणी के लिए यह संसार स्वर्ग है।

4.	**ते पुत्रा ये पितुर्भक्ताः स पिता यस्तु पोषकः।** **तन्मित्रं यत्र विश्वासः सा भार्या यत्र निर्वृतिः ।**	सत्य पुत्र वही है जो पिता का आज्ञाकारी हो । सत्य पिता वही है जो संतान का पालन-पोषण करता हो। सच्चा मित्र वही है जिस पर विश्वास हो और सच्ची पत्नी उसे माना जाए जिससे सुख मिले।
5.	**परोक्षे कार्यहन्तारं प्रत्यक्षे प्रियवादिनम् ।** **वर्जयेत्तादृशं मित्रं विषकुम्भं पयोमुखम् ।।**	ऐसे लोग जो मुंह पर तो मीठी-मीठी बातें करते हैं लेकिन पीठ पीछे सब कामों को बिगाड़ देते हैं, उनको त्याग देना चाहिए। क्योंकि वह सब उस विषकुंभ के समान हैं जिसके ऊपर तो दूध ही दूध भरा होता है परन्तू अन्दर विष भरा होता है। ऐसे लोगों से सावधान रहना चाहिए।
6.	**न विश्वसेत् कुमित्रे च मित्रे चाऽपि न विश्वसेत् । कदाचित् कुपितं मित्रं सर्वं गुह्यं प्रकाशयेत् ।**	विश्वासघाती-धोखेबाज मित्र पर कभी भी विश्वास नहीं करना चाहिए। क्योंकि ऐसा खोटा मित्र जब कभी रूठ जाता है तो सारे के सारे भेद उगल देगा।
7.	**मनसा चिन्तितं कार्यं वाचा नैव प्रकाशयेत्।** **मन्त्रेण रक्षयेद् गूढे कार्ये चाऽपि नियोजयेत्**	इन्सान को चाहिए कि सदा शुद्ध मन से सोच-विचार कर बुद्धि की शक्ति से किए हुए सब कामों को अपनी वाणी द्वारा भी ना बोले। बल्कि मननपूर्वक सच्चे हृदय से उसकी रक्षा करते हुए चुपके-चुपके उसे कार्य में परिणत कर दे।
8.	**कष्टं च खलु मूर्खत्वं कष्टं च खलु यौवनम् ।** **कष्टात् कष्टतरं चैव परगेह निवासनम् ।।**	जो लोग मूर्ख हैं और पागलपन करते हैं ऐसे लोग बहुत कष्टदायक होते हैं। जवानी भी कष्टदायक होती है किन्तु इस सबसे अधिक कष्टदायक दूसरों के घरों में जाकर रहना है।
9.	**शैले शैले न माणिक्यं मौक्तिकं न गजे गजे।** **साधवो न हि सर्वत्र चन्दनं न वने वने ।।**	सारे पहाड़ों पर हीरे-जवाहरात नहीं होते अर्थात् हर पत्थर हीरा नहीं होता। सभी हाथियों के मस्तक में मोती नहीं होता। अच्छे और भले लोग हर स्थान पर नहीं होते और हर जंगल में चंदन के पेड़ नहीं होते।

10.	**पुत्राश्च विविधैः शीलैर्नियोज्याः सततं बुधैः । नीतिज्ञाः शीलसम्पन्ना भवन्ति कुलपूजिताः।**	अच्छे मां-बाप का यह कर्तव्य है कि वे अपनी संतान को गुणवान् बनाने के लिए अधिक से अधिक शुभ गुणों की शिक्षा दें। क्योंकि संसार में व्यक्ति की नहीं वरन के गुणों की पूजा होती है। गुणवान् और ज्ञानवान् संतान अपने ज्ञान की शक्ति से अंधेरे में भी प्रकाश कर देती है।
11.	**माता शत्रुः पिता वैरी येन बालो न पाठितः । न शोभते सभा मध्ये हंस मध्ये बको यथा ।।**	ऐसे मां-बाप अपनी संतान के स्वयं शत्रु हैं जिन्होंने अपनी संतान को उत्तम शिक्षा नहीं दी। क्योंकि बुद्धिहीन जब विद्वानों की सभा में जाते हैं तो वे ऐसे चुपचाप बैठ जाते हैं, जैसे वे गूंगे हों। ऐसे लोगों को उस सभा में देखकर ऐसा प्रतीत होता है जैसे हंसों की सभा में कौआ बैठा हो।
12.	**लालनाद् बहवो दोषास्ताडनाद् बहवो गुणाः । तस्मात्पुत्रं च शिष्यं च तांडयेन्न तु लालयेतू ।।**	जो मां-बाप अपने बच्चों को अधिक लाड़-प्यार से पालते हैं, उनकी हर इच्छा पूरी करते है, ऐसे बच्चों में अनेक बुरी आदतें जन्म ले लेती हैं जो बड़े होने पर उनकी प्रगति में रोड़ा बन जाती हैं। इसलिए बचपन से ही लाड़-प्यार करने के साथ ही बच्चों को समय-समय पर प्रताड़ित भी करते रहना चाहिए।
13.	**श्लोकेन वा तदर्धेन तदर्धार्धाक्षरेण वा। अबन्ध्यं दिवसं कुर्याद् दानाध्ययन कर्मभिः।**	हर मानव को चाहिए कि हर रोज एक वेद मंत्र, आधा श्लोक, एक पाद अथवा एक अक्षर का स्वाध्याय करे और दान अध्ययन आदि शुभ कर्मों को करता हुआ ही दिन को सफल बनाए। दिन के तो एक पल के भी व्यर्थ गंवाना पाप है।
14.	**कान्तावियोगः स्वजनापमानो ऋणस्य शेषः कुनृपस्य सेवा। दरिद्रभावो विषमा सभा च विनाग्निमेते प्रदहन्ति कायम् ।।**	पत्नी का विरह, अपने जनों से प्राप्त अनादर, बचा हुआ कर्ज, दुष्ट राजा की सेवा, दरिद्रता, मूर्खा और अज्ञानियों की सभा । यह सब कुछ आग के बिना ही मानव शरीर को जलाकर रख देता है।

15.	नदीतीरे च ये वृक्षाः परगेहेषु कामिनी। मन्त्रिहीनाश्च राजानः शीघ्रं नश्यन्त्य संशयम् ।।	नदी किनारे लगे हुए वृक्ष, दूसरों के घरों में जाने वाली अथवा रहने वाली औरत और मंत्रियों के बिना राजा। यह सब शीघ्र ही नष्ट हो जाते हैं।
16.	बलं विद्या च विप्राणां राज्ञां सैन्यं बलं तथा। बलं वित्तं च वैश्यानां शूद्राणां परिचर्यकम् ।	ब्राह्मण का बल विद्या है, राजा का बल सेना है, वैश्य का बल वित्त (द्रव्य या धन) है तथा शूद्र का बल सेवा है। आशय यह है कि विद्या के बिना ब्राह्मण,सेना के बिना राजा, धन के बिना वैश्य व सेवा के बिना शूद्र बलहीन होता है।
17.	निर्धनं पुरुषं वेश्या प्रजा भग्नं नृपं त्यजेत् । खगाः वीतफलं वृक्षं भुक्त्वा चाभ्यागतो गृहम् ।।	वेश्या निर्धन पुरुष को, प्रजा पराजित राजा को, पक्षी बिना फलों के वृक्ष को और मेहमान भोजन करके घरों को छोड़ देते हैं।
18.	गृहीत्वा दक्षिणां विप्रास्त्यजन्ति यजमानकम् । प्राप्तविद्या गुरु शिष्या दग्धारण्यं मृगास्तथा।।	ब्राह्मण दक्षिणा लेकर यजमान को, शिष्य शिक्षा प्राप्त करने के पश्चात् गुरु को त्याग देते हैं और पशु जले हुए जंगल से दूर भागते हैं।
19.	दुराचारी दुर्दृष्टिर्द्राऽऽवासी च दुर्जनः। यन्मैत्री क्रियते पुम्भिर्नरः शीघ्रं विनश्यति ।।	मनुष्य को चाहिए कि दुराचारी, कुदृष्टि वाले, बुरे स्थान के वासी और पापी एवं दुर्जन पुरुषों के साथ किसी प्रकार की मित्रता न करे।
20.	समाने शोभते प्रीतिः राज्ञि सेवा च शोभते। वाणिज्यं व्यवहारेषु दिव्या स्त्री शोभते गृहे ।	प्यार सदा अपने से बराबर वाले के साथ करना ही उचित माना गया है और नौकरी राजा की ही उत्तम मानी गई है। कमाने के लिए सबसे उत्तम व्यापार और उत्तम गुण वाली नारी घर में शोभा देती है।

चाणक्य नीति ॥ अथ तृतीयोऽध्यायः तीसरा अध्याय ॥		
1.	कस्य दोषः कुले नास्ति व्याधिनों को न पीडितः। व्यसनं केन न प्राप्तं कस्य सौख्यं निरन्तरम् ।।	दोष किसके कुल में नहीं होता। बीमारी ने आज तक किसे नहीं सताया। दुःख, मुसीबतें किस पर नहीं आईं । सदा सुख भी तो कभी नहीं रहता।
2.	आचारः कुलमाख्याति देशमाख्याति भाषणम्। सम्भ्रमः स्नेहमाख्याति वपुराख्याति भोजनम् ।।	मनुष्य का आचरण उसके कुलशील का परिचायक है। उसकी बोलचाल उसके देश को, उसका मान-सम्मान उसके प्रेम को और शरीर की गठन उंसके भोजन को प्रकट करती है।
3.	सुकुले योजयेत्कन्यां पुत्रं विद्यासु योजयेत् । व्यसने योजयेच्छत्रु मित्रं धर्मे नियोजयेत् ।।	कन्या के लिए सदा श्रेष्ठ कुलं का वर ही तलाश करना चाहिए। पुत्र को शिक्षा प्राप्त करने में लगाना चाहिए। शत्रु को सदा कष्टों और मुसीबतों के घेरे में जकड़े रखना चाहिए और मित्र को सदा धर्म-कर्म के कार्यों में लगा देना चाहिए।
4.	दुर्जनस्य च सर्पस्य वरं सर्पो न दुर्जनः। सर्पो दंशति कालेन दुर्जनस्तु पदे पदे ।।	जब दुर्जन और सांप आपके सामने हों तो इनमें से जब एक का चुनना हो तो सांप दुर्जन से अच्छा होता है। क्योंकि सांप तो काल के आ जाने पर ही काटता है किन्तु दुर्जन तो पग-पग पर नुकसान पहुंचाता।
5.	एतदर्थं कुलीनानां नृपाः कुर्वन्ति संग्रहम् । आदिमध्यावसानेषु न त्यजन्ति च ते नृपम् ।।	राजा लोग सदा यही प्रयास करते हैं कि उनके पास बुद्धिमान और कुलीन लोग रहें। क्योंकि वे उन्नति और अवनति, दुःख और कष्ट, हार और जीत होने पर भी अर्थात् किसी भी अवस्था में साथ नहीं छोड़ते।

6.	**प्रलये भिन्नमर्यादा भवन्ति किल सागराः। सागराः भेदमिच्छन्ति प्रलयेऽपि न साधवः**	जब प्रलय आती है तो सागर अपनी मर्यादा को त्याग देता है और किनारे को भी छोड़ देता है। किन्तु जो लोग सज्जन होते हैं, वे प्रलय के समान बड़े से बड़े भयंकर कष्टों में भी अपनी मर्यादा को नहीं छोड़ते।
7.	**मूर्खस्तु परिहर्तव्यः प्रत्यक्षो द्विपदः पशुः । भिद्यते वाक्शल्येन अदृष्टः कण्टको यथा ।।**	यदि कोई मूर्ख प्राणी आपको मिले तो उसका त्याग करो। क्योंकि वास्तव में वह दो पांव का पशु होता है। ऐसा प्राणी वचनरूपी बाणों से मनुष्य को ऐसे बींधता है जैसे रास्ते का कांटा शरीर में चुभकर उसे बींधकर एक दर्द पैदा करता है।
8.	**रूपयौवनसम्पन्नाः विशालकुलसम्भवाः। विद्याहीनः न शोभते निर्गन्धा इव किंशुकाः**	सुन्दरता और जवानी से सम्पन्न तथा ऊंचे वंश में जन्म लेने पर भी विद्याविहीन पुरुष ऐसे ही सुशोभित नहीं होता जैसे खुशबू के बिना ढाक के फूल।
9.	**कोकिलानां स्वरो रूपं स्त्रीणां रूपं पतिव्रतम् । विद्या रूपं कुरूपाणां क्षमा रूपं तपस्विनाम् ।।**	कोयल का सौन्दर्य--स्वर, औरत का सौन्दर्य-पतिव्रता का धर्म, पुरुषों का सौन्दर्य--विद्या और तपस्वियों की सौन्दर्य- उनकी क्षमाशीलता है।
10.	**त्यजेदेकं कुलस्याऽर्थे ग्रामस्याऽर्थे कुलं त्यजेत् ग्रामं जनपदस्याऽर्थे आत्माऽर्थे पृथिवीं त्यजेत् ।**	प्राणी को चाहिए कि वंश की रक्षा के लिए एक पुरुष को त्याग दे, ग्राम की रक्षा के लिए अपने कुल का भी बलिदान देने से न हटे। आम जनता की भलाई के लिए गांव को भी तिलांजलि देने में संकोच न करे। और अपनी आत्मा की उन्नति के लिए सारी पृथ्वी को त्याग दे।
11.	**उद्योगे नास्ति दारिद्र्यं जपतो नास्ति पातकम् । मौने च कलहो नास्ति नास्ति जागरिते भयम् ।।**	पुरुषार्थी के पास दरिद्रता नहीं आती। भक्ति करने वाले के पास पाप नहीं रहता। यदि आप चुप रहें तो लड़ाई-झगड़ा नहीं होगा। जो जागता है उसे डर नहीं लगता।

12.	**अतिरूपेण वै सीता अतिगर्वेण रावणः। अतिदानाद् बलिर्बद्धो अति सर्वत्र वर्जयेत् ।**	बहुत ही अधिक सुन्दरता के कारण माता सीता का हरण हुआ। बहुत अधिक अहंकारी होने के कारण ही महापण्डित रावण मारा गया। बहुत अधिक दानी होने के कारण राजा बलि बंधन को प्राप्त हुआ। सब दुःखों को देखते हुए हर प्राणी को अति छोड़ देनी चाहिए।
13.	**को हि भारः समर्थानां किं दूरं व्यवसायिनाम् । को विदेशः सविद्यानां कः परः प्रियवादिनाम् ।।**	शक्तिशाली लोगों के लिए कोई भी काम कठिन नहीं है। व्यवसाय करने वालों के लिए कोई भी स्थान दूर नहीं। विद्वान के लिए कोई विदेश नहीं । मीठी बोली बोलने वालों के लिए कोई भी पराया नहीं। वह अपनी मधुर वाणी से सबको ही अपना बना लेता है।
14.	**एकेनाऽपि सुवृक्षेण पुष्पितेन सुगन्धिना। वासितं तद्वनं सर्वं सुपुत्रेण कुलं यथा ।।**	जैसे खुशबू से भरे फूलों वाला एक ही वृक्ष सारे वन में खुशबू फैला देता है, वैसे ही वंश में पैदा होने वाला एक गुणी पुत्र सारे वंश का नाम रोशन कर देता है।
15.	**एकेन शुष्कवृक्षेण दह्यमानेन वह्निना। दह्यते तद्वनं सर्वं कुपुत्रेण कुलं तथा ।।**	जैसे आग में जलते हुए एक ही वृक्ष से वह सारा वन जिसमें वह पैदा हुआ है, जलकर भस्म हो जाता है। वैसे ही एक ही कुपुत्र सारे वंश के गौरव, मान और इज्जत को मिट्टी में मिला देती है।
16.	**एकेनाऽपि सुपुत्रेण विद्यायुक्तेन साधुना। आह्लादितं कुलं सर्वं यथा चन्द्रेण शर्वरी।।**	विद्वान, सदाचारी, ज्ञानी एक ही बेटे से सारा परिवार सदा खुश रहता है। वह तो अपने परिवार के अन्धेरे में वैसे ही चमकता है जैसे अन्धेरी रात में चांद निकलने पर चारों ओर प्रकाश ही प्रकाश चमकता है।
17.	**किं जातैर्बहुभिः पुत्रैः शोकसन्तापकारकैः । वरमेकः कुलाऽऽलम्बी यत्र विश्राम्यते कुलम् ।**	दिल को दुःखी करने वाले शोकदायक बहुत से बेटों के घर में होने से क्या लाभ है? उससे तो कहीं अच्छा यह है कि एक ही पुत्र उत्तम और ज्ञानी हो, जो घर में शांति प्रदान करे।

18.	लालयेत् पञ्च वर्षाणि दश वर्षाणि ताडयेत् । प्राप्ते तु षोडशे वर्षे पुत्रं मित्रवदाचरेत् ।।	पांच वर्ष तक अपने बेटे को लाड़-प्यार करें। फिर दस वर्ष की आयु तक ताड़ना करें और जब पुत्र सोलह वर्ष का हो जाए तो उससे मित्र भांति आचरण करें ।
19.	उपसर्गेऽन्यचक्रे च दुर्भिक्षे च भयावहे। असाधुजन सम्पर्के पलायति स जीवति।।	झगड़ा-फसाद का उपद्रव आदि होने पर, शत्रु द्वारा आक्रमण किए जाने पर, भयंकर दुर्भिक्ष में और दुष्टों का साथ होने पर भी जो प्राणी भाग जाता है, वही अपने जीवन को बचा सकता है।
20.	धर्मार्थकाममोक्षाणां यस्यैकोऽपि न विद्यते। जन्म-जन्मनि मर्येषु मरणं तस्य केवलम् ।।	जो भी प्राणी अपने जीवन में धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष में से किसी भी गुण को नहीं अपनांता, उसे बार-बार मानव जन्म लेकर बार-बार मरने का ही लाभ प्राप्त होता है।
21.	मूर्खा यत्र न पूज्यन्ते धान्यं यत्र सुसञ्चितम् । दाम्पत्येः कलहो नाऽस्ति तत्र श्रीः स्वयमागता।	जहां मूर्खा की पूजा नहीं होती, जहां अन्न धान्य विपुल मात्रा में संचित रहते हैं, जिस घर में पति-पत्नी में झगड़ा नहीं होता,उस घर में स्वयं बिन बुलाए प्रभु आकर निवास करते हैं। सभी प्रेम से रहते हैं, वहां देवी लक्ष्मी स्वयं पधारती हैं। ऐसी जगह पर सुख-समृद्धि सदैव बनी रहती है।

चाणक्य नीति ॥ अथ चतुर्थोऽध्यायः चौथा अध्याय ॥		
1.	आयुः कर्म च वित्तं च विद्या निधनमेव च। पञ्चैतानि हि सृज्यन्ते गर्भस्थस्यैव देहिनः ।।	निम्नलिखित बातें माता के गर्भ में ही निश्चित पांच हो जाती है: १ व्यक्ति कितने साल जियेगा २ वह किस प्रकार का काम करेगा ३ उसके पास कितनी संपत्ति होगी ४ उसकी मृत्यु कब होगी .
2.	साधुभ्यस्ते निवर्तन्ते पुत्रा मित्राणि बान्धवाः ये च तैः सह गन्तारस्तद्धर्मात्सुकृतं कुलम्।।	पुत्र-मित्र और बन्धुगण - साधुओं से दूर रहते हैं। परन्तु जो लोग साधुओं के अनुकूल चलते हैं, उनके इस पुण्य से उनका सारा वंश कृतकृत्य हो जाता है।
3.	दर्शनध्यानसंस्पर्शेर्मत्सी कूर्मी च पक्षिणी। शिशु पालयते नित्यं तथा सज्जन संगतिः ।।	जैसे मछली दर्शन से, कछवी ध्यान से और मादा पक्षी स्पर्श से अपने-अपने बच्चों का सदा पालन-पोषण करती हैं, वैसे ही श्रेष्ठ पुरुषों की संगति प्राणियों का पालन-पोषण करती है।
4.	यावत्स्वस्थो ह्ययं देहो यावन्मृत्युश्च दूरतः ।। तावदात्महितं कुर्यातू प्राणान्ते किं करिष्यति।।	व्यक्ति जब तक निरोग है और मृत्यु बहुत दूर है, तब तक अपने आत्म कल्याण का उपाय कर लेना चाहिए। क्योंकि मृत्यु हो जाने पर कोई कुछ नहीं कर सकता।
5.	कामधेनुगुणा विद्या ह्यकाले फलदायिनी। प्रवासे मातृसदृशी विद्या गुप्तं धनं स्मृतम् ।।	शिक्षा में कामधेनु गौ के समान गुण हैं, यह असमय में भी फल देती है। यह विदेशों में मां के समान रक्षक और हितकारिणी होती है। इसलिए विद्या को छुपा हुआ धन कहा गया है। फिर इस धन से क्यों वंचित हैं?

6.	**वरमेको गुणी पुत्रो निर्गुणैश्च शतैरपि। एकश्चन्द्रस्तमो हन्ति न च ताराः सहस्रशः।।**	सैकड़ों बुद्धिहीन और बदनाम बेटों से एक ही बुद्धिमान बेटा अच्छा होता है। क्योंकि चन्द्रमा ही तो संसार के अन्धेरे का नाश करता है। हजारों-लाखों-करोड़ों तारे तो अन्धेरे को नहीं मिटा सकते।
7.	**मूर्खश्चिरायुर्जातोऽपि तस्माज्जातमृतो वरः। मृतः स च अल्पदुःखाय यावज्जीवं जडो दहेत् ।।**	लम्बी आयु वाले मूर्ख बेटे से पैदा होते ही मर जाने वाला बेटा श्रेष्ठ है। उसका केवल थोड़े ही समय के लिए तो दुःख होता है परन्तु मूर्ख बेटा तो जब तक जीवित है तब तक मां-बाप को दुःख देता ही रहेगा।
8.	**कुग्रामवासः कुलहीनसेवा कुभोजनं क्रोधमुखी च भार्स। पुत्रश्च मूर्खा विधुवा च कन्या विनाग्निना षट् प्रदहन्ति कायम् ।।**	बदनाम ग्राम में निवास करना, कुलहीन की सेवा करना, बुरा भोजन कराने वाली पत्नी, मूर्ख पुत्र और विधवा कन्या । यह छहों बिना आग के ही शरीर को जलाते रहते हैं।
9.	**किं तया क्रियते धेन्वा या न दोग्धी न गर्भिणी। कोऽर्थः पुत्रेण जातेन यो न विद्वान् न भक्तिमान् ।।**	उस गौ से क्या लाभ जो न तो दूध देती है और न गर्भ धारण करती है, ठीक इसी प्रकार उस बेटे से क्या लाभ जो न विद्वान हो और न ईश्वर भक्त ही हो।
10.	**संसार तापदग्धानां त्रयो विश्रान्तिहेतवः। अपत्यं च कलत्रं च सतां संगतिरेव च।।**	इस संसार के तापों से तपते हुए प्राणियों के लिए विद्वानों ने शान्ति प्राप्ति के तीन साधन बताए हैं-पत्नी-पुत्र और भले मित्रों की संगति ।
11.	**सकृज्जल्पन्ति राजानः सकृज्जल्पन्ति पण्डिताः । सकृत कन्याः प्रदीयन्ते त्रीण्येतानि सकृत्सकृत् ।।**	राजा लोग केवल एक बार आज्ञा देते हैं, पण्डित लोग एक बार बोलते हैं। अपनी प्रतिज्ञा पर दृढ़ रहते हुए कन्या दान भी केवल एक बार ही किया जाता है। यह तीनों बातें केवल एक बार होती हैं, बार-बार नहीं ।
12.	**एकाकिना तपो द्वाभ्यां पठनं गायनं त्रिभिः। चतुर्भिर्गमनं क्षेत्रं पञ्चभिर्बहुभिर्रणः ।।**	पूजा-पाठ, भक्ति अकेले में, अध्ययन के लिए दो या इससे अधिक, गाना तीन से अथवा अधिक, यात्रा के लिए चार साथी, खेती के लिए कम से कम पांच, युद्ध के लिए जितने भी अधिक हों उतने ही अच्छे हैं।

13.	**सा भार्या या शुचिर्दक्षा सा भार्या या पतिव्रता। सा भार्या या पतिप्रीता सा भार्या सत्यवादिनी ।।**	पत्नी वही है जो पवित्र हो, जो चतुर (होशियार) हो, जो पतिव्रता बनकर रहे, जो अपने पति से प्रेम करती हो, जो सत्य बोले, झूठ से घृणा करे, केवल ऐसी ही नारी मान-सम्मान और पालन-पोषण करने योग्य है।
14.	**अपुत्रस्य गृहं शून्यं दिशः शून्यास्त्वबान्धवाः मूर्खस्य हृदयं शून्यं सर्वशून्या दरिद्रता ।।**	जिस घर में सन्तान नहीं, वह घर सूना है, जिस इंसान के दोस्त या मित्र नहीं हैं उसकी दसों दिशाएं सूनी हैं। मूर्ख इन्सान का दिल सूना होता है। और दरिद्री व कामचोर के लिए तो सबकुछ सूना है।
15.	**अनभ्यासे विषं शास्त्रमजीर्णे भोजनं विषम् दरिद्रस्य विषं गोष्ठी वृद्धस्य तरुणी विषम्**	जिस आदमी को अभ्यास नहीं, उसके लिए शास्त्र जहर है। जिस आदमी को भोजन ठीक ढंग से न पचे, उसके लिए भोजन करना जहर है। निकम्मे-सुस्त आदमी के लिए सभा में जाना विष के समान ही माना गया है, बूढ़े इंसान के लिए युवा लड़की जहर से कम नहीं होती।
16.	**त्यजेद्धर्मं दयाहीनं विद्याहीनं गुरुं त्यजेत्। त्यजेत्क्रोधमुखीं भार्यां निःस्नेहान् बान्धवांस्त्यजेत् ।।**	मनुष्य को चाहिए कि वे उस धर्म को न मानें जिसमें दया नहीं होती, जो मानव विद्वान नहीं है उसे कभी अपना गुरु न मानें, जिस नारी में अधिक क्रोध हो उसे अपनी पत्नी न मानें। जिन बच्चों में प्रेम नहीं, ज़िन लोगों को मित्रता का पता नहीं, उन्हें भी कभी अपना प्रिय न मानें।
17.	**अध्वा जरा मनुष्याणां वाजिनां बन्धनं जरा। अमैथुनं जरा स्त्रीणां वस्त्राणामातपो जरा।**	मनुष्य के लिए अधिक पैदल चलना, घोड़ों को बांधकर रखना, औरतों के लिए सम्भोग न करना और वस्त्रों को धूप न लगाना। यह सब बुढ़ापा लाने के कारण हैं।
18.	**जनतायोपनेता च यस्तु विद्यां प्रयच्छति। अन्नदाता भयत्राता पंचैते पितुर स्मृता ।।**	जन्म देने वाला पिता, संस्कार डालने वाला गुरु, विद्या देने वाला, अन्नदाता और डर से रक्षा करने वाला । यह पांचों पिता के समान हैं।

19.	**कः कालः कानि मित्राणि को देशः को व्ययागमौ। कश्याऽहं का च मे शक्तिरिति चिन्त्यं मुहुर्मुहुः ।।**	कौन-सा समय है? मेरे मित्र , मेरे शत्रु कौन हैं ? मेरा देश कौन-सा है? मेरी आमदनी क्या है? मेरे खर्च , मेरी ताकत कितनी है? इन सब बातों को ध्यान में रखते हुए बार-बार चिन्तन और मनन करना चाहिए। जो लोग इन सब बातों का ध्यान करते हुए अपने जीवन की गाड़ी को चलाते हैं, उन्हें कभी भी असफलता का मुंह नहीं देखना पड़ता।
20.	**अग्निर्देवो द्विजातीनां मुनीनां हृदि दैवतम् । प्रतिमा स्वल्पबुद्धीनां सर्वत्र समदर्शिनः ।।**	द्विजों (ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य) को अग्निहोत्र माना जाता है। अर्थात अग्नि इनका देवता है। मुनियों के देवता उनके हृदय में वास करते हैं। अल्पबुद्धिवालों के लिए प्रतिमा में देवता होता है और पूजा करने वालों के लिए सब स्थानों पर ही ईश्वर होता है।

चाणक्य नीतिः

॥ अथ पञ्चमोऽध्यायः पांचवां अध्याय ॥

1.	पतिरेव गुरुः स्त्रीणां सर्वस्याभ्यागतो गुरुः। गुरुग्निः द्विजातिनां वर्णानां ब्राह्मणो गुरुः ।।	स्त्रियों के लिए उनका पति ही परमेश्वर व गुरु के समान पूज्य है, अतिथि सबके लिए ही पूज्य और सम्मान योग्य है।ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य के लिए अग्निहोत्र गुरु के समान पूज्य है। चारों वर्गों के लिए ब्राह्मण पूज्य है।
2.	यथा चतुर्भिः कनकं परीक्ष्यते निघर्षणच्छेद नता पताडनैः। तथा चतुर्भिः पुरुषः परीक्ष्यते त्यागेन शीलेन गुणेन कर्मणा।	जैसे शुद्ध सोने की परख के लिए उसे घिसाया, जलाया और काटा जाता है, ठीक वैसे ही इन्सान की परीक्षा उसके दान-पुण्य, गुणशील और आचरण से ही की जाती है।
3.	तावद् भयेषु भेतव्यं यावद् भयमनागतम् । आगतं तु भयं दृष्ट्वा प्रहर्तव्यमशङ्कया।।	दु:खों , मुसीबतों से उसी समय तक डरना चाहिए जब तक वे आपसे दूर हैं। जब दु:ख आपके सिर पर आ पड़े तब निडर और निश्चिन्त होकर उन पर प्रहार करें। उन पर विजय पाने का एक मात्र रास्ता है।
4.	ऐकोदरसमुद्भूताः एकनक्षत्रजातकाः । न भवन्ति समाः शीले यथा बदरिकण्टकाः	एक ही मां-बाप और एक ही नक्षत्र में जन्मे हुए सारे बालकों के गुण कभी भी एक समान नहीं होते। जैसे एक ही पेड़ और एक ही टहना पर पैदा होने वाले कांटे और बेर कभी एक जैसे गुण वाले नहीं होते।
5.	निःस्पृहो ना अधिकारी स्यान्नाकामी मण्डन प्रियः । ना अविदग्धः प्रियं ब्रूयात् स्पष्टवक्ता न वञ्चकः ।।	अधिकारी सदा लोभी होते हैं। श्रृंगार करने वाले कामुक होते हैं। मूर्ख लोग मीठी बोली नहीं बोलते और जो आदमी स्पष्ट व सच कहता है, वह कभी धोखेबाज नहीं होता।

6.	**मूर्खाणां पण्डिता द्वेष्या अधनानां महाधनाः। वाराऽङ्गनाः कुलस्त्रीणां सुभगानां च दुर्भगाः ।।**	मूर्ख विद्वानों से ईर्ष्यावश बुरा बर्ताव करते हैं। सुस्त और निकम्मे लोग धनवानों से घृणा करते हैं। वेश्याएं अच्छी घरेलू औरतों से घृणा करती हैं और विधवाएं सुहागिनों को देखकर जलती हैं।
7.	**आलस्योपगता विद्या परहस्तगताः स्त्रियः। अल्पबीजं हतं क्षेत्रं हतं सैन्यमनायकम् ।**	आलसी लोगों के पास आकर विद्या नष्ट हो जाती है। दूसरों के पास गई नारी नष्ट हो जाती है और सेनापति के बिना सेना बेकार हो जाती है।
8.	**अभ्यासाद्धार्यते विद्या कुलं शीलेन धार्यते। गुणेन ज्ञायते त्वार्यः कोपो नेत्रेण गम्यते।।**	विद्या पाने के लिए निरन्तर अभ्यास करना पड़ता है। कुल के यश और गौरव के लिए कर्म और स्वभाव का अच्छा होना जरूरी है।अच्छे पुरुष की पहचान श्रेष्ठ गुणों से होती है , क्रोध का पता आंखों से लग जाता है।
9.	**वित्तेन रक्ष्यते धर्मो विद्या योगेन रक्ष्यते। मृदुना रक्ष्यते भूपः सत्स्त्रिया रक्ष्यते गृहम् ।**	धन से धर्म की, योग से विद्या की, कोमलता और मीठी वाणी से राजा की तथा सती नारी द्वारा घर की रक्षा होती है।
10.	**अन्यथा वेदपाण्डित्यं शास्त्रमाचारमन्यथा। अन्यथा वदतः शांतानु लोकाः क्लिश्यन्ति चान्यथा।**	वेदों के ज्ञानी पण्डित की निंदा करने वाले, शास्त्रों की श्रेष्ठता को व्यर्थ बताने वाले, बुद्धिमान और ज्ञानी पुरुषों को ढोंगी बताने वाले यह सबके सब व्यर्थ ही दुःख पाते हैं। इन सब वस्तुओं और पुरुषों की निन्दा करने वाले लोगों का न तो कभी भला होता है और न सुख प्राप्त होता है।
11.	**दारिद्र्यनाशनं दानं शीलं दुर्गतिनाशनम्। अज्ञाननाशिनी प्रज्ञा भावना भयनाशिनी।**	दान देने से दरिद्रता का नाश होता है, सुशीलता से मानव कष्टों से मुक्ति पाता है और ईश्वर भक्ति से सारे डर नष्ट हो जाते हैं।
12.	**नास्ति कामसमो व्याधिर्नास्ति मोहसमो रिपुः। नास्ति कोपसमो वह्निर्नास्ति ज्ञानात् परं सुखम् ।**	काम के समान कोई रोग, मोह के समान कोई शत्रु और क्रोध के समान कोई अग्नि तथा ज्ञान से बढ़कर संसार में कोई सुख नहीं है।

13.	**जन्ममृत्यु हि यात्येको भुनक्त्येकः शुभाऽशुभम् । नरकेषु पतत्येक एको याति परां गतिम् ।।**	प्राणी अकेला ही जन्म-मृत्यु के चक्र में फंसता है, अकेला ही पाप-पुण्य का फल भोगता है। अकेला ही अनेक प्रकार के कष्ट भोगता है। अकेला ही मोक्ष प्राप्त करता है और माता-पिता, भाई बन्धु-सगे सम्बन्धी उसके दुःख-सुख को बांट नहीं सकते।
14.	**तृणं ब्रह्मविदः स्वर्गस्तृणं शूरस्य जीवितम् । जिताऽक्षस्य तृणं नारी निःस्पृहस्य तृणं जगत्।**	ब्राह्मण के लिए स्वर्ग, शूरवीर के लिए इन्द्रियों को वश में करना, स्त्री और निर्लोभी के लिए यह संसार तिनके के समान है।
15.	**विद्या मित्रं प्रवासेषु भार्या मित्रं गृहेषु च। व्याधितस्यौषधं मित्रं धर्मो मित्रं मृतस्य च।।**	विदेश में विद्या इन्सान की सच्ची मित्र होती है। घर में शील गुणों वाली नारी मनुष्य की सच्ची मित्र होती है। रोगी के लिए दवाई सच्ची मित्र होती है और मरने के पश्चात् प्राणी का धर्म ही उसका साथी है।
16.	**वृथा वृष्टिः समुद्रेषु वृथा तृप्तेषु भोजनम् । वृथा दानं धनाढ्येषु वृथा दीपो दिवाऽपि च ।।**	समुद्रों में वर्षा, पेट भरे हुए के लिए भोजन कराना, धनवान को दान देना और दिन में दीपक जलाना। यह सब काम व्यर्थ माने गए हैं। इनको करने से कोई लाभ नहीं होता।
17.	**नास्ति मेघसमं तोयं नास्ति चात्मसमं बलम् । नास्ति चक्षुः समं तेजो नास्ति धान्यसमं प्रियम् ।।**	वर्षा के पानी के समान अन्य कोई पानी शुद्ध नहीं होता। आत्मबल के मुकाबले दूसरा कोई बल नहीं। आत्मबल शरीर और इन्द्रियों के बल से बढ़कर बल माना गया है। आंखों की ज्योति से बढकर, कोई ज्योति इस संसार में नहीं तथा अन्न के समान दूसरा और कोई पदार्थ नहीं।
18.	**अधना धनमिच्छन्ति वाचं चैव चतुष्पदाः । मानवाः स्वर्गमिच्छन्ति मोक्षमिच्छन्ति देवताः ।।**	निर्धनों को धन की इच्छा रहती है। मनुष्य को सदा स्वर्ग की इच्छा रहती है और देवगण सदा मुक्ति की कामना करते हैं।

19.	**सत्येन थार्यते पृथिवी सत्येन तपते रविः । सत्येन वाति वायुश्च सर्वं सत्ये प्रतिष्ठितम् ।।**	सत्य की नींव पर यह पृथ्वी टिकी हुई है। सूर्य भी सत्य के प्रताप से तपता है। सत्य के प्रताप से ही वायु चलती है और सच्ची बात तो यह है कि यह पूरा विश्व सत्य के बल पर ही टिका हुआ है।
20.	**चला लक्ष्मीश्चलाः प्राणाश्चले जीवित यौवनम् चलाचले च संसारे धर्म एको हि निश्चलः ।।**	इस चराचर संसार में लक्ष्मी, प्राण, यौवन और जीवन सबके सब नाशवान हैं। केवल एक धर्म ही कभी नाशवान नहीं होता, धर्म ही अमर है, धर्म सच्चा साथी है।
21.	**नराणां नापितो धूर्तः पक्षिणां चैव वायसः। चतुष्पदां शृगालस्तु स्त्रीणां धूर्ता च मालिनी।**	मनुष्यो में नाई और पक्षियों में कौआ, चौपायों में गीदड़ और स्त्रियों में मालिन । यह सब बड़े चतुर-चालाक माने जाते हैं।
22.	**राजपत्नी गुरोः पत्नी मित्रपत्नी तथैव च। । पत्नीमाता स्वमाता च पंचैता मातरः स्मृता ।**	राजा की पत्नी, गुरु की पत्नी, मित्र की पत्नी, पत्नी की माता व स्वयं की माता । ये पांच माताएं हैं। इन पर कभी भी कुदृष्टि नहीं डालनी चाहिए। ये सम्माननीया हैं।

चाणक्य नीतिः ॥ अथ षष्ठोऽध्यायः छठा अध्याय ॥		
1.	श्रुत्वा धर्मं विजानाति श्रुत्वा त्यजति दुर्मतिम् श्रुत्वा ज्ञानमवाप्नोति श्रुत्वा मोक्षमवाप्नुयात् ।	श्रवण करने से शास्त्रों, वेदों के ज्ञान से ही मानव धर्म को जान सकता है और इस ज्ञान से ही पाप बुद्धि को वह छोड़ देता है। इसी ज्ञान की शक्ति से वह श्रेष्ठ माना जाता है और ज्ञान की यही शक्ति उसका कल्याण करती है। इसी शक्ति से वह मोक्ष प्राप्त करता है।
2.	पक्षिणां काकश्चाण्डालः पशूनां चैव कुक्कुरः मुनीनां कोपीःचाण्डालः सर्वेषां चैव निन्दकः	पक्षियों में कौआ, पशुओं में कुत्ता, मुनियों में क्रोधी- यह सब चाण्डाल होते हैं और सबकी निन्दा करने वाला मनुष्य सब मनुष्यो में चांडाल है।
3.	भस्मना शुध्यते कांस्यं ताम्रमम्लेन शुध्यति। रजसा शुध्यते नारी नदी वेगेन शुध्यति ।।	कांसे के बर्तन राख से मांजने पर, तांबे के बर्तन खटाई से रगड़ने पर शुद्ध हो जाते हैं। स्त्री रजस्वला होने से पवित्र होती है। नदी तेज बहने से निर्मल हो जाती है।
4.	भ्रमन् सम्पूज्यते राजा भ्रमन् सम्पूज्यते द्विजः। भ्रमन् सम्पूज्यते योगी भ्रमन्ती स्त्री विनश्यति।।	भ्रमण करने वाला राजा, ब्राह्मण और योगी सबसे आदर पाते हैं। परन्तु भ्रमण करने वाली नारी सदा भ्रष्ट मानी जाती है।
5.	यस्यार्थास्तस्य मित्राणि यस्यार्थास्तस्य बान्धवाः। यस्यार्थाः सा पुमांल्लोके यस्यार्थाः स च पण्डितः ।।	इस संसार में वही व्यक्ति विद्वान व सम्माननीय है जिसके पास धन है। धन होने से ही उसके मित्र, बंधुजन भी उसके अपने हैं। धन न हो तो रिश्ते-नातेदार भी दूर रहते हैं। भले ही वह व्यक्ति विद्वान क्यों न हो, सभी उसकी उपेक्षा करते हैं।

6.	**ताद्दशी जायते बुद्धिर्व्यवसायो ऽपि ताद्दशः। सहायास्ताद्दशा एव याद्दशी भवितव्यता।।**	जैसी होनी होती है, वैसी ही बुद्धि हो जाती है और वैसे ही कार्य- कलाप मनुष्य करने लगता है। उसके संगी-साथी भी वैसे ही होते हैं। लेकिन मनुष्य को भाग्य के भरोसे न रहकर पुरुषार्थ भी करते रहना चाहिए।
7.	**कालः पचति भूतानि कालः संहरते प्रजाः। कालः सुप्तेषु जागर्ति कालो हि दुरतिक्रमः**	मृत्यु सब इन्सानों को खा जाती है। जब सारा संसार समाप्त हो जाता है तो काल फिर भी जागता रहता है। मृत्यु कभी नहीं मरती। हां, वह सब इन्सानों को मार देती है। इसमें कोई सन्देह नहीं कि मृत्यु ही इस संसार में सबसे बड़ी बलवान है। मृत्यु को आज तक कोई नहीं लांघ सका।
8.	**न पश्यति च जन्मान्धः कामान्धो नैव पश्यति । न पश्यति मदोन्मत्तो ह्यर्थो दोषानु न पश्यति ।।**	जन्म से जो अन्धा है, जो कामवासना में अन्धा है, शराब एवं दूसरे नशे करने वाले को भी कुछ दिखाई नहीं देता । स्वार्थी और पापी इन्सान जब अपना मतलब सिद्ध करना चाहता है तो इस धुन में वह ऐसा अन्धा होता है कि उसे किसी भी काम में दोष नजर नहीं आता।
9.	**स्वयं कर्म करोत्यात्मा स्वयं तत्फलमश्नुते। स्वयं भ्रमति संसारे स्वयं तस्माद्विमुच्यते ।**	जीवन तो स्वयं में ही एक कर्म है और यह जीवन ही कर्म कर्ता है। उन कर्मों के सहारे ही वह दुःख-सुख भोगता है। यही जीव कई योनियों ॐ इस संसार में जन्म लेता है और जब-जब यह जीव पुरुषार्थ करता है तो संसार के बन्धनों से मुक्त हो जाता है।
10.	**राजा राष्ट्रकृतं पापं राज्ञः पापं पुरोहितः । भर्ता च स्त्रीकृतं पापं शिष्यपापं गुरुस्तथा।**	देश में किए गए पापों को राजा, राजा के द्वारा किए गए पापों को पुरोहित, पत्नी द्वारा किए गए पापों को पति और शिष्यों द्वारा किए गए। पापों को गुरु ही भोगता है।
11.	**ऋणकर्ता पिता शत्रुः माता च व्यभिचारिणी भार्या रूपवती शत्रुः पुत्रः शत्रुरपण्डितः ।।**	कर्जा लेने वाला पिता, व्यभिचारिणी मां, सुन्दर स्त्री और मूर्ख पुत्र यह सब शत्रु के समान होते हैं।

12.	लुब्धमर्थेन गृह्णीयात् स्तब्धमञ्जलिकर्मणा। मूर्ख छन्दोऽनुवृत्तेन यथार्थत्वेन पण्डितम् ।	लोभी को धन से, अभिमानी को हाथ जोड़कर, मूर्ख को उसकी इच्छा के अनुसार और विद्वान को सदा सत्य बोलकर वश में कर सकता है।
13.	वरं न राज्यं न कुराज्यराज्यं वरं न मित्रः न कुमित्रमित्रम् । वरं न शिष्यो न कुशिष्य शिष्यो वरं न दाराः न कुदारदाराः ।।	यदि कोई राजा पापी और स्वार्थी है तो उससे राजा, राज्य का न होना ही अच्छा है। इसी प्रकार धोखेबाज और ढोंगी मित्रों से मित्र न होना ही अच्छा है। चरित्रहीन शिष्यों से तो शिष्य का न होना ही अच्छा है और दुराचारी नारी को पत्नी बनाने से तो अच्छा है, इन्सान विवाह ही न करे।
14.	कुराजराज्येन कुतः प्रजासुखं कुमित्रमित्रेण कुतोऽस्ति निर्वृत्तिः । कुदारदारैश्च कुतो गृहे रतिः कुशिष्यमध्यापयतः कुतो यशः ।।	पापी और अत्याचारी राजा के राज में प्रजा को सुख मिलना असम्भव है, धोखेबाज मित्रों से कभी आनंद मिले यह एक सपना ही है, दुष्ट नारी को पत्नी बनाकर सुख की आशा रखना बेकार है। मूर्ख शिष्य को शिक्षा देने से शिक्षक को कोई लाभ और यश नहीं मिलता होता।
15.	इन्द्रियाणि च संयम्य बकवत् पण्डितो नरः। देशकालबलं ज्ञात्वा सर्वकार्याणि साधयेत् ।	विद्वान और ज्ञानी इन्सान को चाहिए कि वह अपनी इन्द्रियों को वश में करके, मन को एकाग्रचित्त करके तथा देश-काल और अपने बल को अच्छी तरह जान कर बगुले के समान अपने सारे कार्यों को सिद्ध करे।
16.	प्रत्युत्थानं च युद्धं च संविभागं च बन्धुषु । स्वयमाक्रम्य भुक्तं च शिक्षेच्चत्वारि कुक्कुटात् ।।	यथा समय जागना, युद्ध के लिए तैयार रहना, बंधुओं को उनका हिस्सा देना और आक्रमण करके भोजन करना। इन चारों बातों को मुर्ग से सीखना चाहिए।
17.	गूढ च मैथुन धाष्ट्र्यं च काले काले च संग्रहम् अप्रमत्तमविश्वासं पञ्च शिक्षेच्च वायसात् ।	छिपकर मैथुन करना, धृष्टता, समय-समय पर संग्रह करना, समय होशियार रहना और किसी पर भी विश्वास न करना। इन पांच बातों को कौए से सीखना चाहिए।

18.	**सिंहादेकं बकादेकं शिक्षेच्चत्वारि कुक्कुटात् वायसात्पञ्च शिक्षेच्च षट् शुनस्त्रीणि गर्दभात्**	इन्सान को शेर और बगुले से एक-एक, मुर्गे से चार, कौए से पांच कुत्ते से छ: और गधे से तीन गुण सीखने चाहिए।
19.	**प्रभूतं कार्यमल्पं वा यन्नरः कर्तुमिच्छति। सर्वारम्भेण तत्कार्यं सिंहादेकं प्रचक्षते ।।**	इन्सान जो भी छोटा-बड़ा काम करना चाहता है, उसे अपनी पूर्ण शक्ति से करे। यह शिक्षा उसे सिंह से लेनी चाहिए।
20.	**बह्वाशी स्वल्पसन्तुष्टः सुनिद्रो लघुचेतनः। स्वामिभक्तश्च शूरश्च षडेते श्वानतो गुणाः ।।**	अधिक खाने की शक्ति रखना, यदि न मिले तो थोड़े में ही सब्र करना, गहरी नींद में सोना, जरा भी आहट होने पर जाग जाना, अपने मालिक से वफादारी और उसकी भक्ति करना, बहादुरी से शत्रु से युद्ध करना। यह छह गुण इन्सान को कुत्ते से सीखने चाहिए।
21.	**सुश्रान्तोऽपि वहेद्भारं शीतोष्णं न च पश्यति। सन्तुष्टश्चरति नित्यं त्रीणि शिक्षेच्च गर्दभात् ।।**	बहुत थककर भी बोझ उठाते जाना, गर्मी-सर्दी की परवाह न करना और सदा धैर्य व संतोष से जीवन व्यतीत करना। इन तीन गुणों को धैर्यवान गधे से सीखना चाहिए।
22.	**य एतान् विंशति गुणाना चरिष्यति मानवः। कार्याऽवस्थासु सर्वासु अजेयः स भविष्यति।।**	जो भी प्राणी इन बीस गुणों को अपने जीवन में पल्ले बांधकर इन्हें पूर्ण रूप से धारण करेगा, वंह सदा ही सफल रहेगा। खुशियां उसके साथ रहेंगी।

चाणक्य नीति ॥ अथ सप्तमोऽध्यायः सातवां अध्याय ॥		
1.	अर्थनाशं मनस्तापं गृहे दुश्चरितानि च। वञ्चनं चऽपमानं च मतिमान्न प्रकाशयेत् ।।	एक बुद्धिमान के लिए यह जरूरी है कि वह धन का नाश, मन, संताप, घर के दोष-किसी को भी न बताए। किसी के द्वारा ठगे जाना और बेइज्जत होना। इन बातों को भूलकर भी किसी के सामने न कहें।
2.	धन-धान्य प्रयोगेषु विद्यासंग्रहेषु च।। आंहारे व्यवहारे च त्यक्तलज्जः सुखी भवेतू	अन्न के विक्रय में, विद्या के संग्रह में और व्यवहार में शर्म न करने वाला प्राणी सदा सुखी रहता है और सुखी पुरुष ही सदा खुश रहता है।
3.	सन्तोषामृततृप्तानां यत्सुखं शान्तचेतसाम् । न च तद् धनलुब्धानामितश्चेतश्च धावताम् ।।	धैर्य व संतोष रूपी अमृत का पान करके तृप्त रहने वाले व शांतचित्त लोगों को जिस सुख की प्राप्ति होती है, वह सुख लोभी, लालची, स्वार्थी इधर-उधर मन भटकाने वाले, लोगों को कभी प्राप्त नहीं हो सकता।
4.	सन्तोषस्त्रिषु कर्तव्यः स्वदारे भोजने धने। त्रिषु चैव न कर्तव्योऽध्ययने जपदानयोः ।।	अपनी पत्नी, भोजन और धन इन तीन में ही संतोष करना चाहिए। परन्तु अध्ययन, पूजा-पाठ, दान इन तीनों के बारे में कभी भी संतोष नहीं करना चाहिए। इनकी कोई सीमा नहीं है। यह तो वह सागर है जिसने आप जितना भी आगे बढ़ते जाओगे, उतना ही ज्ञान बढ़ेगा, उतनी ही बुद्धि विकसित होगी।
5.	विप्रयोर्विप्रवक्ष्योश्च दम्पत्योः स्वामिभृत्ययोः । अन्तरेण न गन्तव्यं हलस्य वृषभस्य च ।।	दो ब्राह्मण, ब्राह्मण और आग, पति और पत्नी, स्वामी और सेवक, तथा हल और बैल। इनके बीच में से होकर कभी भी नहीं निकलना चाहिए।

6.	**पादाभ्यां न स्पृशेदग्निं गुरुं ब्राह्मणमेव च।** **नैव गां न कुमारी च न वृद्धं न शिशुं तथा ।।**	न आग को, न गुरु को, न ही ब्राह्मण को, न गौ को, न बड़े-बूढ़ों और बच्चों को कभी भी पांव से छूना चाहिए।
7.	**शकटं पञ्चहस्तेन दशहस्तेन वाजिनम् ।** **हस्ती शतहस्तेन देशत्यागेन दुर्जनम् ।।**	गाड़ी से पांच हाथ, घोड़े से दस हाथ, हाथी से सौ हाथ दूर रहना चाहिए। दुर्जन से बचने के लिए यदि देश को भी छोड़ना पड़े तो इसमें तनिक भी संकोच नहीं करना चाहिए।
8.	**हस्ती अंकुशमात्रेण वाजी हस्तेन ताड्यते।** **शृंगी लगुडहस्तेन खड्गहस्तेन दुर्जनः ।।**	हाथी हाथ में पकड़े हुए अंकुश से वश में किया जाता है। घोड़ा चाबुक से पीटकर वश में किया जाता है। सींग वाले पशुओं को डंडे से पीटकर वश में करते हैं, दुर्जनः अपने ही हाथ की तलवार से मारा जाता है।
9.	**तुष्यन्ति भोजने विप्रा मयूरा घनगर्जिते।** **साधवः परसम्पत्तौ खलाः परविपत्तिषु ।।**	ब्राह्मण भरपेट भोजन मिलने पर, मोर बादलों के गर्जने पर, सज्जन दूसरों की सम्पत्ति, दुष्ट दूसरों को विपत्ति में देखकर बड़े खुश होते हैं।
10.	**अनुलोमेन बलिनं प्रतिलोमेन दुर्जनम् ।** **आत्मतुल्यबलं शत्रु विनयेन बलेन वा।।**	बलवान शत्रु को उसके अनुकूल व्यवहार करके, दुष्ट शत्रु को उसके प्रतिकूल व्यवहार करके तथा अपने बराबर की ताकत वाले शत्रु को विनय अथवा ताकत से जीता जा सकता है।
11.	**बाहुवीर्यं बलं राज्ञो ब्राह्मणो ब्रह्मविद् बली ।** **रूपयौवनमाधुर्यं स्त्रीणां बलमुत्तमम् ।।**	भुजाओं का बल ही राजा का बल है। ब्रह्म ज्ञान और वेद का पांडित्य ब्राह्मण का बल है। सौन्दर्य, यौवन और मीठा बोलना नारी का बल है।
12.	**नाऽत्यन्तं सरलैर्भाव्यं गत्वा पश्य** **वनस्थलीम्।। छिद्यन्ते सरलास्त्र** **कुब्जास्तिष्ठन्ति पादपाः ।।**	मानव को अत्यन्त सरल स्वभाव का नहीं होना चाहिए। वनों में जाकर देखो कि वहां सीधे वृक्षों को ही काटा जाता है और टेढ़े-मेढ़े वृक्ष बड़े मजे से खड़े रहते हैं, उन्हें कोई नहीं काटता।।

13.	यत्रोदकं तत्र वसन्ति हंसाः तथैव शुष्कं परिवर्जयन्ति। न हंसतुल्येन नरेण भाव्यं पुनस्त्यजन्ते पुनराश्रयन्ते ।।	"जहां पर भी जल होता है वहीं पर हंस आते हैं। जब जल सूख जाता है तो वे उस स्थान को छोड़कर चले जाते हैं। परन्तु मानव को हंस की भांति बार-बार आने-जाने वाला स्वार्थी नहीं होना चाहिए।
14.	उपार्जितानां वित्तानां त्याग एव हि रक्षणम् । तडागोदरसंस्थानां परिस्राव इवाऽम्भसाम् ।।	कमाए हुए धन को खर्च करना, दान देना उसकी रक्षा मानी जाती है। जैसे जल से भरे तालाब के अन्दर भरे हुए जल को निकालते रहने से ही तो जल स्वच्छ रह सकता है।
15.	स्वर्गस्थितानामिह जीवलोके चत्वारि चिह्नानि वसन्ति देहे। दानप्रसङ्गो मधुरा च वाणी देवाऽर्चनं ब्राह्मणतर्पणं च ।	इस संसार में दिव्य पुरुषों के शरीर में चार चिह्न होते हैं। दान देने का स्वभाव, मीठा बोलना, देवी-देवताओं को प्रणाम करना, ब्राह्मणों को खुश करना।
16.	अत्यन्तकोपः कटुका च वाणी दरिद्रता च स्वजनेषु वैरम् ।। नीचप्रसंङ्गः कुलहीनसेवा चिह्नानि देहे नरकस्थितानाम् ।।	नरक में रहने वालों के शरीर में यह चिह्न होते हैं-बहुत ही अधिक क्रोधी स्वभाव, कड़वी भाषा, दरिद्रता, अपने लोगों से ही दुश्मनी, घटिया लोगों के साथ उठना-बैठना, कुलहीनों (छोटी जाति के लोगों की) सेवा करना आदि।
17.	गम्यते यदि मृगेन्द्र-मन्दिरं लभ्यते करिकपोल मौक्तिकम् । जम्बुकालयगते च प्राप्यते वत्स-पुच्छ-खर-चर्म-खण्डनम् ।।	शेर की गुफा में जाने पर ही हाथी के मस्तक का मोती प्राप्त होता है और गीदड़ के स्थान में जाने पर बछड़े की पूंछ तथा गधे के चमड़े मिलते हैं।
18.	शुनः पुच्छमिव व्यर्थं जीवितं विद्यया बिना। न गुहयगोपने शक्तं न च दंश निवारणे।।	शिक्षा के बिना व्यक्ति का जीवन कुत्ते की पूंछ के समान व्यर्थ है, कुत्ता अपनी दुम से न तो गुप्त इन्द्रियों को छुपा सकता है और न ही मच्छर-मक्खी आदि को उड़ा सकता है। मूर्ख इन्सान भी न छिपाने वाली बात को छुपा सकता है और न ही शत्रु के आक्रमण को रोक सकता है।

19.	वाचः शौचं च मनसः शौचमिन्द्रियनिग्रहः । सर्वभूते दया शौचं एतच्छौचं पराऽर्थिनाम् ।	मन, वाणी, इंद्रिय संयम का महत्त्व तभी है जब व्यक्ति में जीवमात्र के प्रति परमार्थ भाव हो । अन्यथा इसका कोई महत्त्व नहीं है।
20.	पुष्पगन्धं तिले तैलं काष्ठेऽग्निं पयसि घृतम् । इक्षौ गुडं तथा देहे पश्यात्मानं विवेकतः ।।।	जैसे फूलों में खुशबू होती है, तिलों से तेल निकलता है, काठ में आग, दूध में घी और ईख में गुड़, शक्कर होता है। वैसे ही शरीर में भी आत्मा का वास है। बुद्धिमान और ज्ञानी लोगों को आत्मा से ही परमात्मा को पाकर अपने जीवन का कल्याण करना चाहिए।

चाणक्य नीति

॥ अथ अष्टमोऽध्यायः आठवाँ अध्याय ॥

1.	अधमा धनमिच्छन्ति धनमानौ च मध्यमाः। उत्तमा मानमिच्छन्ति मानो हि महतां धनम्।।	अधम पुरुष धन की कामना करते हैं। मध्यम वर्ग के लोग धन और सम्मान दोनों की ही कामना करते हैं। उत्तम श्रेणी के लोगों को केवल सम्मान की ही भूख रहती है।
2.	इक्षुरापः पयो मूलं ताम्बूलं फलमौषधम् । भक्षयित्वा अपि कर्तव्याः स्नानदानादिकाः क्रियाः ।।	गन्ना, जल, दूध, कन्द, पान, फल और दवाई का सेवन करने पर भी धार्मिक कार्य किए जा सकते हैं।
3.	चाण्डालानां सहस्रेषु सूरिभिस्तत्त्वदर्शिभिः ।। एको हि यवनः प्रोक्तो न नीचो यवनात्परः ।।	दुर्जन व्यक्ति को मनीषियों ने हजारों चाण्डालों के समान कहा है। क्योंकि ऐसा व्यक्ति हजारों चाण्डालों से भी कहीं अधिक विनाशक होता है। इसलिए दुर्जन व्यक्ति से सदैव किनारा करने में ही भलाई है।
4.	वित्तं देहि गुणान्वितेषु मतिमन्नान्यत्र देहि क्वचितु, प्राप्तं वारिनिधेर्जलं घनमुखे माधुर्ययुक्तं सदा। जीवान्स्थावरजङ्गमांश्च सकलान् संजीव्य भूमण्डलम्, भूयः पश्य तदेव कोटिगुणितं गच्छन्तमम्भोनिधिम् ।।	बद्धिमान व्यक्ति सदैव गुणी व्यक्ति को धन व दानादि दे। क्योंकि गुणी को दिया गया दान व धन हजार गुना होकर दानकर्ता को मिलता है। अवगुणी को दिया गया दान व्यर्थ होता है। यह स्थिति वैसी ही है जैसे सागर के खारे जल को मेघ ग्रहण करके वर्षा द्वारा बरसाते हैं तो वही खारा जल चराचर जगत के जीवों के लिए लाभकारी हो जाता है। पुनः वह जल सागर में ही समा जाता है।

5.	दीपो भक्षयते ध्वान्तं कज्जलं च प्रसूयते।। यदन्नं भक्षयते ये नित्यं जायते तादृशी प्रजा।	दीप अन्धेरे को खाता है और काजल को पैदा करता है। इसी प्रकार प्राणी जैसा भी अन्न खाते हैं, उनके यहां वैसी ही संतान पैदा होती है।
6.	तैलाभ्यंगे चिताधूमे मैथुने क्षौरकर्मणि। तावद् भवति चाण्डालो यावत्स्नानं न आचरेत् ।।	शरीर पर तेल की मालिश करने के पश्चात्, श्मशान में जाने पर, नारी के साथ सम्भोग करने और हजामत बनवाने के पश्चात पुरुष जब तक नहा नहीं लेता, तब तक वह चांडाल ही होता है।
7.	अजीर्णे भेषजं वारि जीर्णे वारि बलप्रदम् ।। भोजने चाऽमृतं वारि भोजनान्ते विषं भवेत्	अपच में पानी पीना दवाई के समान है। खाना हजम होने पर पानी पीना शक्ति प्रदान करता है। खाने के मध्य पानी पीना अमृत के समान माना जाता है और खाना खाने के पश्चात् जल पीना जहर के बराबर है।
8.	वृद्धकाले मृता भार्या बन्धुहस्ते गतं धनम् । भोजनं च पराधीनं तिस्रः पुंसां विडम्बनाः ।	बुढ़ापे में पत्नी की मृत्यु हो जाना, अपने कमाए हुए धन का अन्य लोगों (सम्बन्धियों) के हाथ में चले जाना और खाने के लिए दूसरों की ओर देखना। यह तीनों इन्सान के लिए मृत्यु से कम नहीं हैं।
9.	नाग्निहोत्रं विना वेदा न च दानं विना क्रिया। न भावेन विना सिद्धिस्तस्माद् भावो हि कारणम् ।	यज्ञ के बिना वेद पढ़ना व्यर्थ है। दान-दक्षिणा के बिना यज्ञ व्यर्थ है। श्रद्धा और भक्ति के बिना किसी भी काम में सफलता नहीं मिलती। मन की भावना का सम्बन्ध ही सब सिद्धियों का मूल कारण है।
10.	न देवो विद्यते काष्ठेन पाषाणेन मृण्मये। भावे हि विद्यते देवस्तस्माद भावोहि कारणम् ।	लकड़ी, पत्थर और धातु की भावना तथा श्रद्धा के साथ पूजा-पाठ करने से ही सिद्धि प्राप्त होती है और ईश्वर अपने भक्तों पर प्रसन्न होते हैं।
11.	क्रोधो वैवस्वतो राजा तृष्णा वैतरणी नदी। विद्या कामदुधा धेनुः सन्तोषो नन्दनं वनम्	क्रोध साक्षात धर्मराज का ही रूप है। तृष्णा वैतरणी नदी है। शिक्षा कामधेनु गौ है। धैर्य (संतोष) से बढ़कर कोई सुख नहीं है।

12.	**काष्ठपाषाणधातूनां कृत्वा भावेन सेवनम् ।। श्रद्धया च तयां सिद्धस्तस्य विष्णोः प्रसीदतः**	ईश्वर इन लक्कड़-पत्थर और मिट्टी की मूर्तियों में बसा हुआ नहीं है। ईश्वर तो आपकी भावनाओं में बसा है। हां, जैसी आपकी भावना होगी वैसे ही आपको ईश्वर मिलेगा अर्थात् आप जहां पर भी अपनी भावना को प्रकट करोगे, वहीं पर आपको ईश्वर मिलेगा।
13.	**शान्तितुल्यं तपो नास्ति न सन्तोषात्परं सुखम् । न तृष्णायाः परो व्याधिर्न च धर्मो दयापरः ।।**	शांति के बराबर कोई तपस्या नहीं। संतोष करने वाले सबसे अधिक सुखी होते हैं। तृष्णा से बढ़कर कोई रोग नहीं है और जो प्राणी दया करते हैं, वही सबसे अधिक धर्म का पालन करने वाले होते हैं।
14.	**गुणो भूषयते रूपं शीलं भूषयते कुलम् । सिद्धिर्भूषयते विद्यां भोगो भूषयते धनम् ।।**	जो लोग गुणवान हैं, ज्ञानी हैं, उनका रूप अतिसुन्दर लगता है। अथवा गुणों से ही रूप की शोभा है। वे शील कुल को चार चांद लगा देते हैं। सिद्धि करने से विद्या बढ़ती है और भोग धन को अलंकृत कर देता है।
15.	**निर्गुणस्य हतं रूपं दुःशीलस्य हतं कुलम् । असिद्धस्य हता विद्या अभोगेन हतं धनम् ।**	जिस आदमी में कोई गुण नहीं होता, उसकी सुन्दरता व्यर्थ होती है। शील रहित प्राणियों का कुल निन्दत होता है। अलौकिक शक्तियों के बिना मोक्ष की ओर न ले जाने वाली और जिस शिक्षा से बुद्धि प्राप्त न हो। वह सब बेकार हैं तथा भोग के बिना धन बेकार होता है।
16.	**शुचिर्भूमिगतं तोयं शुद्धा नारी पतिव्रता। शुचिः क्षेमकरो राजा सन्तोषी ब्राह्मणः शुचिः ।।**	धरती के अन्दर से निकलने वाला जल, पतिव्रता नारी, कल्याण करने वाला। राजा और हर हाल में संतुष्ट रहने वाला ब्राह्मण सदा शुद्ध और पवित्र तथा गुणवान माने जाते हैं।
17.	**असन्तुष्टाः द्विजा नष्टाः सन्तुष्टाश्च महीभृतः ।। सलज्जा गणिका नष्टाः निर्लज्जाश्च कुलाङ्गनाः ।।**	जिस ब्राह्मण को संतोष नहीं, संतोष करने वाले राजा और शर्म करने वाली वेश्याएं और भले व शरीफ वंश की लज्जाहीन नारियां, यह सब विनाश के लक्षण माने जाते हैं।

18.	**किं कुलेने विशालेन विद्याहीनेन देहिनाम् । दुष्कुलीनोऽपि विद्वांश्च देवैरपि सुपूज्यते ।।**	अनपढ़ और बड़े कुल से क्या लाभ है। इसके विपरीत नीच कुल में पैदा होने वाला विद्वान भी देवताओं द्वारा पूजित होता है।
19.	**विद्वानः प्रशस्यते लोके विद्वानः गच्छति गौरवम् । विद्ययाः लभते सर्वं विद्या सर्वत्र पूज्यते ।।**	इस दुनिया में केवल विद्वानों की ही प्रशंसा होती है, विद्वानों का ही सम्मान होता है। विद्या की ही शक्ति से धन-धान्य, इज्जत-मान आदि सब मिलते हैं। विद्या का ही सब जगह सम्मान होता है।
20.	**मांसभक्षैः सुरापानैमूर्खश्चाक्षर वर्जितैः । पशुभिः पुरुषाकारैर्भाराऽऽक्रान्ता च मेदिनी।।**	शराब पीने वाले, मूर्ख, मांस भक्षण करने वाले, अनपढ़ भ्रष्टाचारी आदि। यह सब मानवरूपी पशु ही होते हैं। ऐसे लोगों के बोझ से पृथ्वी दबी रहती है। पृथ्वी पापी के बोझ से ही दु:खी होती है।
21.	**अन्नहीनो दहेद्र राष्ट्र मन्त्रहीनश्च ऋत्विजः।। यजमानं दानहीनो नास्ति यज्ञसमो रिपुः ।।**	बिना अन्न के यज्ञ देश को, मन्त्रहीन यज्ञ पुरोहितों को, यज्ञ करवाकर दान न देने वाले यजमानों को यज्ञ भस्म करके रख देता है।

चाणक्य नीति ॥ अथ नवमोऽध्यायः नवां अध्याय ॥		
1.	मुक्तिमिच्छसि चेत्तात विषयान् विषवत् त्यज। क्षमार्जवं दया शौचं सत्यं पीयूषवद् भज।।	हे प्राणियो! यदि तुम लोग मुक्ति की इच्छा करते हो तो इन विषयों को विष के समान मानकर त्याग दो और क्षमा, धैर्य, सरलता, विनम्रता, ईमानदारी, उदारता, दूसरों की भलाई, दया एवं पवित्रता, सत्य इन सब चीजों को जीवन में अमृत के समान समझो।।
2.	परस्परस्य मर्माणि ये भाषन्ते नराधमाः। त एवं विलयं यान्ति वल्मीकोदरसर्पवत् ।।	जो पतित लोग एक-दूसरे के प्रति अन्तरात्मा को दुःखदायक मर्मों को आहत करने वाले बोल बोलते हैं तो ऐसे लोग अवश्य ही नष्ट हो जाते हैं। जैसे बांबी में फंसकर सांप मर जाता है।
3.	गन्धः सुवर्णे फलमिक्षुदण्डे नाऽकारि पुष्पं खलु चन्दनस्य। विद्वान् धनाढ्यश्च नृपश्चि रायुः धातुः पुरा कोऽपि न बुद्धिदोऽभूत् ।।	सष्टि के स्वामी ब्रह्मा ने सोने में सुगंध नहीं डाली, ईख के खेतों में फल नहीं लगाए, चन्दन के वृक्ष में फूल नहीं लगाए, विद्वान प्राणियों को धनी और राजा को दीर्घजीवी नहीं बनाया । इससे तो ऐसा पता चलता है। कि पूर्व काल में कोई भी ईश्वर को बुद्धि देने वाला नहीं था।
4.	दूतो न सञ्चरति खे न चलेच्च वार्ता । पूर्वं न जल्पितमिदं न च सङ्गमोऽस्ति ।व्योम्नि स्थितं रविशशिग्रहणं प्रशस्तं जानाति यो द्विजवरः स कथं न विद्वान् ।।	आकाश में तो कोई दूत नहीं जा सकता , न ही वहां किसी से वार्तालाप कर सकता है। न ही इस बारे में पहले से किसी ने कुछ बता रखा है और न ही किसी का संगम हो सकता है। किन्तु फिर भी जो ब्रह्मश्रेष्ठ आकाश में स्थित सूर्य और चांद को लगने वाले ग्रहणों को जान लेता है वह विद्वान क्यों नहीं माना जाता?

5.	**विद्यार्थी सेवकः पान्थः क्षुधाऽऽर्ती भयकातरः । भाण्डारी प्रतिहारी च सप्त सुप्तान प्रबोधयेत् ।।**	विद्यार्थी, नौकर, राही, भूख से पीड़ित, डर से डरा हुआ, भंडारी और द्वारपाल यदि यह मात्र सोते हैं तो इन्हें हर हाल में जगा देना चाहिए। इनके सोने से हानि होती है और जांगते रहने से लाभ होता है।
6.	**सर्वोषधीनाममृता प्रधाना सर्वेषु सौख्येष्व शनं प्रधानम्। सर्वेन्द्रियाणां नयनं प्रधानं सर्वेषु गात्रेषु शिरः प्रधानम् ।।**	सारी दवाइयों और जड़ी-बूटियों में गिलोय, सब सुखों में भोजन, सब ज्ञानेन्द्रियों में आंख और सब अंगों में सिर सर्वश्रेष्ठ होता है।
7.	**अहिं नृपं च शार्दूलं किटिं च बालकं तथा । परश्वानं च मूर्ख च सप्त सुप्ता न बोधयेत् ।।**	सांप, राजा, बाघ, सूअर, बालक, दूसरे को कुत्ता और मूर्ख यदि यह सब के सब सो रहे हों तो इनको जगाने की भूल नहीं करनी चाहिए।
8.	**अर्थाऽधीताश्च यैर्वेदास्तथा शूद्रान्नभोजिनाः । ते द्विजाः किं करिष्यन्ति निर्विषा इव पन्नगाः ।।**	जो ब्राह्मण केवल धन कमाने के लिए ही वेदों का अध्ययन करते हैं। जो शूद्रों, पतितों, शराबी-कबाबी और बुरे एवं नीच लोगों का अन्न खाते हैं, वे विषहीन सर्प के समान क्या कर सकते हैं? उन्हें इस संसार में कोई यश, कोई गौरव प्राप्त नहीं होता।
9.	**यस्मिन् रुष्टे भयं नास्ति तुष्टे नैव धनाऽऽगमः। निग्रहोऽनुग्रहो नास्ति स रुष्टः किं करिष्यति।।**	जिसको गुस्सा आने पर कोई उससे नहीं डरता और खुश हो धन प्राप्त होने की आशा नहीं करता, जो न तो दण्ड दे सकता है, न ही कृपा कर सकता है, ऐसा यदि रूठ भी जाए तो किसी का क्या बिगाड़ सकता है।
10.	**निर्विषेणाऽपि सर्पण कर्तव्या महती फणा। विषमस्तु न चाप्यस्तु घटाटोपो भयंकरः ।।**	जिन सांपों में जहर नहीं होता, उन्हें भी अपना बड़ा फन फैलाना चाहिए। यह तो कोई नहीं जानता कि इस फन में जहर है भी कि नहीं। हां, आडम्बर से दूसरे लोग डर अवश्य ही जाते हैं।
11.	**इक्षुदण्डास्तिलाः क्षुद्राःकान्ता हेम च मेदिनी चन्दनं दधि ताम्बूलं मर्दनं गुणवर्धनम् ।।**	ईख, तिल, क्षुद्र नारी, सेना, जमीन, चन्दन-दही और पान को जितना भी मिलाया जाता है, उतने ही इनके गुण बढ़ते हैं।

12.	प्रातर्भूतप्रसंगेन मध्याहे स्त्रीप्रसङ्गतः ।। रात्रौ चौर्यप्रसंगेन कालो गच्छत्यंधीमताम् ।।	मूर्ख लोग सुबह के शुभ समय जुआ खेलना आरम्भ कर देते हैं। दोपहर को नारी के साथ संभोग करते हैं और रात के समय चोरी करने अथवा अन्य बुरे काम करने के लिए घर से निकलते हैं।
13.	स्वहस्तग्रथिता माला स्वहस्तघृष्टचन्दनम् । स्वहस्तलिखितं स्तोत्रं शक्रस्यापि श्रियं हरेत्	अपने हाथ से गुंथी हुई माला, अपने हाथ से घिसा हुआ चन्दन और अपने हाथ से लिखा हुआ स्तोत्र। यह सारे काम इन्द्र की भी शोभा और लक्ष्मी को हर लेते हैं। जो लोग माला को गूंथते हैं उसका परिश्रम उस लाभ से भी अधिक होता है, जो इसके धारण करने से होता है।
14.	दरिद्रता धीरतया विराजते कुवस्त्रता शुभ्रतया विराजते। कदन्नता चोष्णतया विराजते कुरूपता शीलतया विराजते।।	दरिद्रता उस समय तक दुःख नहीं देती जब तक कि आपके पास धैर्य है। गन्दा वस्त्र साफ रखने से बहुत सुन्दर लगने लगता है। बुरा खाना भी यदि गर्म हो तो खाने में स्वादिष्ट लगता है। असुन्दर नारी यदि गुणवान है तो भी प्रिय लगती है।

चाणक्य नीति **॥ अथ दशमोऽध्यायः दसवां अध्याय ॥**		
1.	**धनहीनो न हीनश्च धनिकः स सुनिश्चयः । विद्यारत्नेन यो हीनः स हीनः सर्ववस्तुषु।।**	निर्धन और हीन प्राणी, यदि उस के पास विद्या का धन है- वह भी धनहीन नहीं है। इसमें क्या संदेह है कि वह धनवान है। विद्या तो सबसे अनमोल धन है । परन्तु जिन लोगों के पास विद्या धन नहीं है, वे सभी चीजों से हीन माने जाते हैं।
2.	**दृष्टिपूतं न्यसेत् पादं वस्त्रपूतं पिबेज्जलम् । शास्त्रपूतं वदेद् वाक्यं मनः पूतं समाचरेत् ।।**	मानव के लिए जरूरी है कि वह नीचे धरती पर अच्छी तरह देखकर ही अपने कदमों को आगे बढ़ाए। जल को कपड़े से छानकर पीए ,शास्त्रों के अनुसार ही सोच-समझकर वचन बोले तथा श्रेष्ठ व्यवहार करे। ऐसे ही लोग उन्नति करते हैं और समाज में सम्मान पाते हैं।
3.	**रंकं करोति राजानं राजानं रंक मेव च।। धनिनं निर्धनं चैव निर्धनं धनिनं विधिः ।।**	यह अटूट सत्य है कि ईश्वर कंगाल को राजा और राजा को कंगाल बना देता है। ईश्वर की ही यह शक्ति है कि वह धनी को निर्धन और निर्धन को धनी बना देता है।
4.	**कवयः किं न पश्यन्ति किं न कुर्वन्ति योषितः । मद्यपाः किं न जल्पन्ति किं न भक्षन्ति वायसाः ।।**	कवि लोग हर चीज को देखते हैं। औरत क्या नहीं कर सकती ? नशे में डूबा प्राणी क्या नहीं कर सकता और कौए क्या नहीं खाते ?
5.	**कामं क्रोधं तथा लोभं स्वादं शृङ्गारकौतुके। अतिनिद्राऽतिसेवे च विद्यार्थी ह्यष्ट वर्जयेत् ।।**	हर विद्यार्थी को चाहिए कि वह काम, क्रोध, लोभ, मोह, स्वाद, शृंगार, खेल-कूद, घूमना-फिरना, अधिक सोना आदि का दृढ़ता से त्याग कर दे। तभी वह अपनी शिक्षा को सार्थक कर सकता है।

6.	देयं भोज्यधनं सदा सुकृतिभिर्गो सञ्चितव्यं कदा श्रीकर्णस्य बलेश्च विक्रमपतेरद्यापि कीर्तिः स्थिता। अस्माकं मधु दानभोगरहितं नष्टं चिरात्सञ्चितं । निर्वाणादिति पाणिपादयुगले घर्षन्त्यहो मक्षिकाः ।।	पुण्यात्माओं का भोग करने योग्य धन सदा दान देने के लिए होता है। वे कभी भी उसका उपयोग नहीं करते। क्योंकि दान देने के कारण ही दानवीर कर्ण, महाराज बलि और विक्रमादित्य की कीर्ति आज भी अक्षुण्ण है। दान और भोग से रहित मधुमक्खियों का आदिकाल से संचित किया हुआ मधु नष्ट हो गया। ऐसा सोचकर मधुमक्खियां अपने दोनों हाथ और पांव मलती हैं। यह उनकी उस भूल का पश्चाताप है।
7.	सुखार्थी वा त्यजेद्विद्यां विद्यार्थी वा त्यजेत् सुखम् । सुखार्थिनः कुतो विद्या विद्यार्थिनः कुतो सुखम् ।।	जो प्राणी सुख की अभिलाषा करते हैं, उन्हें विद्या प्राप्ति की आशा छोड़ देनी चाहिए। जिसे विद्या प्राप्ति की इच्छा हो उसे संसारी सुखों का त्याग करना होगा। क्योंकि जो भी प्राणी सुख चाहते हैं, उन्हें विद्या प्राप्त नहीं होती और विद्यार्थी को सुख नहीं मिल सकता ।
8.	लुब्धानां याचकः शत्रुर्मूर्खाणां बोधकः रिपुः ।। जारस्त्रीणां पतिः शत्रुश्चोराणां चन्द्रमा रिपुः ।।	हर लालची का शत्रु, मांगने वाला होता है। मूर्खों का शत्रु सदुपदेश देने वाला होता है। पति चरित्रहीन स्त्री का शत्रु होता है और चारों का शत्रु चन्द्रमा होता है।
9.	येषां न विद्या न तपो न दानं न ज्ञानं न शीलं न गुणो न धर्मः । ते मर्त्यलोके भुवि भारभूता मनुष्यरूपेण मृगाश्चरन्ति ।।	जिन लोगों के पास न तो विद्या है और न ही वे तपस्या करते हैं, न ही वें दान देते हैं, न ही उनमें धैर्य और शीलता है, न ही दूसरों का भला करके अपने धर्म का पालन करते हैं। ऐसे लोग धरती पर पशुओं की भांति बोझ हैं। उनमें और पशुओं में कोई अंतर नहीं होता।
10.	अन्तःसारविहीनानामुपदेशो न जायते। मलयाचलसंसर्गात् न वेणुश्चन्दनायते।।	मन की योग्यता न रखने वाले, बुरे विचारों वाले प्राणियों पर ज्ञान एवं उपदेश का कोई असर नहीं होता। जैसे मलयगिरी से आने वाली पवन के स्पर्श से बांस चन्दन नहीं बन सकता।

11.	**यस्य नास्ति स्वयं प्रज्ञा शास्त्रं तस्य करोति किम् ।। लोचनाभ्यां विहीनस्य दर्पणः किं करिष्यति ।।**	जो लोग बुद्धिहीन हैं, शास्त्र भी उनका कल्याण नहीं कर सकते । जैसे अन्धे लोगों के लिए दर्पण बिल्कुल बेकार होता है। मगर दर्पण अपनी चमक से उनकी आंखों का प्रकाश तो वापस नहीं ला सकता।
12.	**दुर्जनं सज्जनं कर्तुमुपायो न हि भूतले । अपानं शतधा थोतं न श्रेष्ठमिन्द्रियं भवेतू ।।।**	ऐसा कोई उपाय नहीं है जिससे पापी आदमी सज्जन बन सके। क्योंकि गुदा को भले ही कितनी बार धोया जाए लेकिन फिर भी वह मुख नहीं बन सकती।
13.	**आत्मद्वेषात् भवेन्मृत्युः परद्वेषात् धनक्षयः। राजद्वेषात् भवेन्नाशो ब्रह्मद्वेषातू कुलक्षयः ।।**	अपनी ही आत्मा से द्वेष करने से इन्सान की मृत्यु हो जाती है। शत्रु से द्वेष करने से धन का नाश हो जाता है। राजा से द्वेष करने से स्वयं का नाश होता है और ब्राह्मण से द्वेष करने से कुल का नाश हो जाता है।
14.	**वरं वनं व्याघ्रगजेन्द्रसेवितं द्रुमालयं पत्रफलाम्बुभोजनम् । तृणेषु शय्या शतजीर्णवल्कलं न बन्धुमध्ये धनहीनजीवनम् ।।**	जिस शेरों और हाथियों से भरे वन में वृक्ष ही घर होते हैं, पत्तों और फलों से ही भोजन तथा नदी का जल पीकर ही गुजारा किया जाता हो।रात को घास पर ही सोना हो, फटे-पुराने वस्त्र की व्यवस्था हो । ऐसे जंगल में रहना अच्छा है। परन्तु अपने सगे-सम्बन्धियों और मित्रों के बीच धनहीन जीवन व्यतीत करना अच्छा नहीं है।
15.	**विप्रो वृक्षस्तस्य मूलं च सन्ध्या वेदाः शाखा धर्मकर्माणि पत्रम् । तस्मान्मूलं यत्नतो रक्षणीयं छिन्ने मूले नैव शाखा न पत्रम् ।।**	ब्राह्मणरूपी वृक्ष की जड़ संध्या है। वेद उसकी टहनियां हैं। धर्म-कर्म उसके पत्ते हैं। इसलिए इस जड़ की रक्षा पूरे यत्न से करनी चाहिए, क्योंकि जब जड़ कट जाती है तो पत्ते-टहनियां सब नष्ट हो जाते हैं।
16.	**माता च कमलादेवी पिता देवो जनार्दनः । बान्धवा विष्णुभक्ताश्च स्वदेशो भुवनत्रयम्**	जिसकी मां लक्ष्मी हो, पिता सर्वशक्तिमान प्रभु हों, भक्त जिस सज्जन के बन्धु हों। ऐसे लोगों के लिए तीनों लोक ही अपने देश के समान हैं।

17.	**का चिन्ता मम जीवने यदि हरिर्विश्वम्भरो गीयते । नो चेदर्भकजीवनाय जननीस्तन्यं कथं निर्मयेत्। इत्यालोच्य मुहुर्मुहुर्यदुपते लक्ष्मीपते केवलं त्वत्पादाम्बुजसेवनेन सततं कालो मया नीयते ।।**	जब हम ईश्वर को इस संसार का पालनहार कहते हैं तो फिर हम अंपने खाने-पीने की क्यों चिन्ता करते हैं? यदि ईश्वर संसार का पालनहार न होता तो बच्चे के जन्म के साथ ही उसकी मां के स्तनों में दूध कहां से आने लगता। बार-बार ऐसा विचार कर हे प्रजापते! मैं सदा आपके चरणों में अपना समय व्यतीत करता हूं।
18.	**एकवृक्षसमारूढा नाना वर्णा विहङ्गमाः। प्रभाते दिक्षु दशसु गच्छन्ति का तत्र परिवेदना ।।**	अनेक रंग-रूपों वाले पक्षी शाम ढलते ही एक वृक्ष पर आकर बैठते हैं और किन्तु सुबह होते ही अलग-अलग दिशाओं में उड़ जाते हैं। यदि इन पक्षियों की भांति हम प्राणि एक घर में ही अपने-अपने परिवार में , एक साथ रहते हुए जीवन व्यतीत करें तो कितना आनन्द प्राप्त हो।
19.	**बुद्धिर्यस्य बलं तस्य निर्बुद्धेस्तु कुतो बलम् । वने सिंहो मदोन्मत्तः शशकेन निपातितः ।।**	जिसके पास बुद्धि है, उसी के पास बल है। बुद्धिहीन के पास बल कहां? एक वन में बुद्धिमान खरगोश ने शेर को मार डाला था।
20.	**गीर्वाणवाणीषु विशिष्टबुद्धिस्तथापि भाषान्तरलोलुपोऽहम् । यथा सुराणाममृते स्थितेऽपि स्वर्गाङ्गनानामधरासवे रुचिः ।।**	चाणक्य - यद्यपि मैं संस्कृत भाषा में विशेष बुद्धि और अच्छा ज्ञान रखता हूं, इस पर भी मैं दूसरी भाषाओं का लोभी हूं। जैसे अमृत का पान करने वाले देवताओं की इच्छा भी स्वर्ग की अप्सराओं के साथ मन बहलाने की होती है।
21.	**अन्नाद् दशगुणं पिष्टं पिष्टाद् दशगुणं पयः। पयसोऽष्टगुणं मांसं मांसाद् दशगुणं घृतम् ।**	चावल से दस गुणा ताकत आटे में, आटे से दस गुणा ताकत दूध में, दूध से आठ गुना ताकत मांस में और मांस से दस गुणा ताकत देसी घी में होती है।
22.	**शाकेन रोगा वर्धन्ते पयसा वर्धते तनुः ।। घृतेन वर्धते वीर्यं मांसान्मांसं प्रवर्धते ।।**	साग से बीमारियां पैदा होती हैं। दूध पीने से शरीर की पुष्टि तथा वृद्धि होती है, घी खाने से वीर्य बढ़ता है और मांस खाने से मांस बढ़ता है।

चाणक्य नीति **॥ अथ एकादशोऽध्यायः ग्यारहवां अध्याय ॥**		
1.	**दातृत्वं प्रियवक्तृत्वं धीरत्वमुचितज्ञता।** **अभ्यासेन न लभ्यन्ते चत्वारः सहजा गुणाः ।**	दान देने की आदत, मीठा बोलना, शूरत्व, पांडित्य आदि गुण स्वाभाविक होते हैं। यदि कोई प्राणी चाहे कि मैं इन गुणों को अभ्यास करके प्राप्त कर लें तो यह कभी संभव नहीं हो सकता।
2.	**आत्मवर्गं परित्यज्य परवर्गं समाश्रयेत् ।** **स्वयमेव लयं याति यथा राजाऽन्यधर्मतः ।।**	जो लोग अपने धर्म को छोड़कर दूसरे के धर्म का सहारा लेते हैं, वे स्वयं ही ऐसे नष्ट हो जाते हैं, जैसे कोई राजा दूसरे के धर्म का आसरा लेते ही नष्ट हो जाता है। अपना धर्म कैसा भी हो वही अपना होता है, दूसरा तो पराया रहेगा ही।
3.	**कलौ दशसहस्रेषु हरिस्त्यजति मेदिनीम् ।** **तदर्थं जाह्नवीतोयं तदर्थं ग्रामदेवता ।।**	कलियुग के दस सहस्र वर्ष बीत जाने पर भगवान विष्णु इस पृथ्वी को त्याग देते हैं। पांच हजार वर्ष बीत जाने पर गंगा जल पृथ्वी को त्याग देता है। ढाई हजार वर्ष बीत जाने पर ग्राम देवता ग्राम या पृथ्वी को त्याग देता है।
4.	**गृहासक्तस्य नो विद्या नो दया मांसभोजिनः** **द्रव्यलुब्धस्य नो सत्यं स्त्रैणस्य न पवित्रता ।**	घर में मोह-प्यार रखने वाले विद्यार्थी को कभी विद्या प्राप्त नहीं हो सकती। जो प्राणी मांसाहारी है, उसमें कभी दया नहीं होती। धन के लोभी और लालची लोगों में कभी सच बोलने की आदत नहीं होती। व्यभिचारी में जो लोग पवित्रता ढूंढ़ते हैं, वे मूर्ख होते हैं।

5.	**न दुर्जनः साधुदशामुपैति बहु प्रकारैरपि शिक्ष्यमाणः । आमुलसिक्तः पयसा घृतेन न निम्बवृक्षो मधुरत्वमेति ।।**	यह एक कटु सत्य है कि पापी लोग अनेक प्रकार से समझाने पर अपने पापों को त्याग नहीं सकते। उनका सज्जन बनना कठिन है। जैसे नीम की जड़ में हर रोज सुबह उठकर दूध-घी और मीठा डाला जाए तो भी वह कभी मीठा नहीं हो सकता।
6.	**हस्ती स्थूलतनुः स चाङ्कुशवशः किं हस्ति मात्रोङ्कुशो दीपे प्रज्वलिते प्रणश्यति तमः किं दीपमात्रं तमः। वज्रणापि हताः पतन्ति गिरयः किं वज्रमात्रो गिरिम् तेजो यस्य, विराजते स बुलवान् स्थूलेषु कः प्रत्ययः ।।**	हाथी का शरीर तो बहुत बड़ा होता है, फिर भी वह अंकुश के वश में रहता है। जैसे दीपक के जलाने से अंधकार नष्ट हो जाता है तो क्या दीपक अन्धकार से बड़ा है ? हथौड़े की चोटों से बड़े-बड़े पत्थर और पहाड़ तोड़े जाते हैं। कुल्हाड़ी से बड़े-बड़े वृक्ष काटकर फेंक दिए जाते हैं तो क्या कुल्हाड़ी वृक्षों से बड़ी होती है ? बात स्पष्ट है कि जिसका भी तेज चमकता है, वही बलवान है। केवल बडा और मोटा होने से तो इन्सान बलवान नहीं होता।
7.	**अन्तर्गतमलो दुष्टस्तीर्थस्नानशतैरपि। न शुध्यति यथा भाण्डं सुराया दाहितं च यत् ।**	जिनका मन ही शुद्ध नहीं है, ऐसे पापी लोग सैकड़ों बार भी तीर्थ स्थानों पर जाएं तो वे कभी शुद्ध नहीं हो सकते। जैसे शराब के बर्तन को यदि जलाया जाए तो भी वह कभी शुद्ध नहीं हो सकता।
8.	**नवेत्ति यो यस्य गुणप्रकर्षं स तं सदा निन्दति नाऽत्र चित्रम् । यथा किराती करिकुम्भ जाता मुक्ताः परित्यज्य विभर्ति गुञ्जाः ।।**	जो प्राणी जिसके गुणों के विषय में नहीं जानता, वही उसकी निन्दा करता है। यह जरा भी हैरानी की बात नहीं है। जैसे भीलनी हाथी के मस्तक से पैदा होने वाले मोतियों को छोड़कर घुघुची की माला को धारण कर लेती है।
9.	**ये तु संवत्सरं पूर्णं नित्यं मौनेन भुञ्जते । युगकोटिसहस्रं तु स्वर्गलोके महीयते ।।**	जो प्राणी एक वर्ष तक मौन रहकर भोजन करते हैं, वे सहस्र करोड़ वर्ष तक स्वर्ग लोक में रहते हैं और वहां पर पूजे भी जाते हैं।

10.	एकाहारेण सन्तुष्टः षट्कर्मनिरतः सदा। ऋतुकालाभिगामी च स विप्रो द्विज उच्यते।	एक समय का भोजन करके ही संतुष्ट होकर अपना अध्ययन और अध्यापन, छः कर्मों में तत्पर रहने वाले और ऋतुकाल में स्त्री से सहवास करने वाले को द्विज कहते हैं।
11.	अकृष्टफलमूलेन वनवासरतः सदा। कुरुतेऽहरहः श्राद्धमृषिर्विप्रः स उच्यते।।	जो लोग बिना जोती हुई धरती से फल-फूल और कन्दमूल फल खाकर अपना जीवन व्यतीत करना चाहते हैं, जो सदा बनवास में ही अनुराग रखते हैं और प्रतिदिन श्राद्ध करते हैं। ऐसे ब्राह्मण ऋषि कहलाने के हकदार होते हैं।
12.	लौकिके कर्मणि रतः पशूनां परिपालकः ।। वाणिज्यकृषिकर्ता यः स विप्रो वैश्य उच्यते।	जो ब्राह्मण लौकिक कर्मों में संलग्न हो, पशुओं को पालता हो, कारोबार अथवा खेती करता हो उसे ब्राह्मण नहीं वैश्य कहते हैं।
13.	लाक्षादितैलनीलानां कुसुम्भमधुसर्पिषाम् । विक्रेता मद्यमांसानां स विप्रः शूद्र उच्यते।।	जो ब्राह्मण लाख (लाक्षा), तेल, नील (वस्त्र रंगने का रंग), शहद, घी, मदिरा, मांस आदि का विक्रय करता है उसे शूद्र कहते हैं।
14.	परकार्यविहन्ता च दाम्भिकः स्वार्थसाधकः छली द्वेषी मृदुः क्रूरो विप्रो मार्जार उच्यते।	जो दूसरे लोगों के कामों को बिगाड़कर ढोंग रचता हो, क्रूर हो, अन्दर से पापी हो, ऐसे ब्राह्मण को मार्जार (विडाल) कहते हैं।
15.	वापी-कूप-तडागानामाराम-सुर-वेश्मनाम् । उच्छेदने निराऽऽशङ्कः स विप्रोम्लेच्छ उच्यते	जो ब्राह्मण कुआं, तालाब एवं बागों और मंदिरों की तोड़-फोड़ करता हो, वह सबसे बड़ा मलेच्छ कहलाता है।
16.	देवद्रव्यं गुरुद्रव्यं परदाराऽभिमर्शनम् । निर्वाहः सर्वभूतेषु विप्रश्चाण्डाल उच्यते ।।	जो ब्राह्मण विद्वानों और गुरुजनों के धन की चोरी करता हो, पराई नारियों के साथ संभोग करता हो और हर अच्छे-बुरे प्राणी से निबाह करे, बुरे-भले की पहचान खत्म कर दे, वह चाण्डाल कहलाता है।

चाणक्य नीति ॥ अथ द्वादशोऽध्यायः बारहवां अध्याय ॥		
1.	सानन्दं सदनं सुताश्च सुधियः कान्ता प्रियालापिनी इच्छापूर्तिधनं स्वयोषितिरतिः स्वाऽऽज्ञापराः सेवकाः। आतिथ्यं शिवपूजनं प्रतिदिनं मिष्टान्नपानं गृहे साधोः सङ्गमुपासते च सततं धन्यो गृहस्थाऽऽश्रमः ।।	वह गृहस्थ भगवान् की कृपा को पा चुका है जिसके घर में आनंददायी वातावरण है जिसके बच्चे गुणी है. जिसकी पत्नी मधुर वाणी बोलती है परिश्रम और ईमानदारी से कमाया धन हो, दु:ख में काम करने वाले अच्छे मित्र हों, नौकर अपने मालिक की सेवा करने वाले हों, मेहमानों की सेवा सम्मान से होती हो, ईश्वर उपासना होती हो। जिसमें स्वादिष्ट और शुद्ध भोजन पकते हों और जहां पर सदा अच्छे विद्वान आते हों। ऐसा घर वास्तव में सुन्दर स्वर्ग , शांति का प्रतीक होता है।
2.	साधूनां दर्शनं पुण्यं तीर्थभूता हि साधवः। कालेन फलते तीर्थं सद्यः साधुसमागमः ।।	साधु, संतों, ऋषियों, मुनियों के दर्शनों से ही पुण्य प्राप्त होता है, कल्याण होता है। यह साधु-संत-ऋषि-मुनि तीर्थ रूप हैं। तीर्थ तो समय आने पर ही फल देते हैं किन्तु साधु-संतों के दर्शन मात्र से ही मानव का कल्याण हो जाता है।
3.	विप्रपादोदककर्दमानि न वेदशास्त्रध्वनि गर्जितानि । स्वाहा-स्वधाकार-विवर्जितानि श्मशानतुल्यानि गृहाणि तानि ।।	जिन घरों में ब्राह्मणों के चरण पवित्र जल से धोने पर कीचड़ नहीं हो जाता, जहाँ पर वेदों का पाठ नहीं होता, जिस स्थान पर हवन नहीं होता, ऐसे घर को श्मशान भूमि ही समझना चाहिए अर्थात् ऐसा घर मुर्दों का निवास स्थान होता है।

4.	**सत्यं माता पिता ज्ञानं धर्मो भ्राता दया स्वसा। शान्तिः पत्नी क्षमा पुत्रः षडेते मम बान्धवाः ।।**	आनन्दमयी व्यवस्था में खोए योगी ने बोला - हे प्राणी ! सत्य-मां, ज्ञान-पिता, धर्म- भाई, दया- बहन, शांति -पत्नी और क्षमा मेरे पुत्र के समान है। मैं इन् छः प्रिय बन्धु-बांधव पाकर आनंदमग्न हूं।
5.	**विप्राऽस्मिन्नगरे महान् कथय कस्तालद्माणां गणः को दाता रजको ददाति वसनं प्रातर्गृहीत्वा निशि। को दक्षः परदारवित्तहरणे सर्वेऽपि दक्षो जनः कस्माज्जीवसि हे सखे विषकृमिन्यायेन जीवाम्यहम् ।।**	किसी राही ने नगर में पहुंचकर पूछा- हे विप्र ! इस नगर में सबसे बड़ा कौन है? उदार दाता कौन है? चतुर कौन है? विप्र ने हंसकर उत्तर दिया ताड़ के वृक्षों का झुंड सबसे बड़ा है। धोबी उदार दाता है, जो सुबह वस्त्रों को ले जाकर घाट पर धोता है और शाम को वापस आता है। दूसरे का धन - स्त्री का अपहरण करने वाले चतुर होते हैं। राही ने आश्चर्य से पूछा- तुम ऐसे शहर में कैसे रहते हो ? विप्र हंसकर बोला जैसे विष का कीड़ा विष में ही पैदा होता है और विष में ही जीता है, वैसे ही मैं भी जीता हूं।
6.	**अनित्यानि शरीराणि विभवो नैव शाश्वतः। नित्यं सन्निहितो मृत्युः कर्त्तव्यो धर्मसंग्रहः ।**	जीवन का दूसरा नाम मृत्यु है। मानव शरीर नाशवान है। यह धन, दौलत, भी सदा नहीं रहते। मौत हर समय हमारे सिर पर मंडराती है। अतः धर्म का पालन हमें हर पल करना चाहिए।
7.	**आमन्त्रणोत्सवा विप्रा गावो नवतृणोत्सवाः। पत्युत्साहयुता नार्यः अहं कृष्णरणोत्सवः।**	भोजन का निमन्त्रण ब्राह्मण के लिए उत्सव के समान , हर रोज चरने के लिए हरी-हरी घास गौओं के लिए उत्सव के समान, पति का सदा उत्साह से भरे रहना ही नारी के लिए उत्सव के समान है और मेरे लिए भयंकर मार काट वाला युद्ध ही उत्सव के समान है।

8.	मातृवत् परदारांश्च परद्रव्याणि लोष्ठवत्। आत्मवतू सर्वभूतानि यः पश्यति स पश्यति।।	जो व्यक्ति पराई नारी को मां के समान, पराए धन को ढेले के समान और सारे लोगों को अपनी आत्मा के समान देखता है वह सच्चा इंसान है और वही विद्वान है ।
9.	धर्मे तत्परता मुखे मधुरता दाने समुत्साहता मित्रेऽवञ्चकता गुरौ विनयता चित्तेऽति गम्भीरता। आचारे शुचिता गुणे रसिकता शास्त्रेषु विज्ञानता रूपे सुन्दरता शिवे भजनता सत्स्वेव संदृश्यते ।।	धर्म में तत्परता, मुंह में मीठे बोल, दान देने का अत्यन्त उत्साह होना, मित्रों के लिए प्यार की भावना, गुरु के प्रति श्रद्धा और नम्रता, मन में समुद्र के समान गंभीरता, आचरण में शुद्धि और प्रेम गुणों में सबकी भलाई की कल्पना, शास्त्रों का ज्ञाता और प्रचारक रूप में सुन्दरता और मुख पर हंसी । यह सब बातें केवल अच्छे लोगों में ही देखने को मिलती हैं।
10.	काष्ठं कल्पतरुः सुमेरुरचलश्चिन्तामणिः प्रस्तरः सूर्यस्तीव्रकरः शशी क्षयकरः क्षारो हि वारान्निधिः। कामो नष्टतनुर्बलिदितिसुतो नित्यं पशुः कामगौ- नेतांस्ते तुलयामि भो रघुपते कस्योपमा दीयते ।।	कल्पवृक्ष लकड़ी ही तो है। सुमेरु पर्वत पत्थरों का समूह है। चिन्तामणि भी तो एक पत्थर है। सूर्य की किरणें कितनी प्रचंड हैं। चन्द्रमा क्षीण होने वाला है। समुद्र का पानी नमकीन है । कामदेव अशरीर है। बलि एक राक्षस का नाम है। कामधेनु एक पशु का नाम है । हे ईश्वर ! इनमें से किसी की भी छाया आपके बराबर तो नहीं हो सकती। फिर मैं किससे आपकी उपमा करूं।
11.	विनयं राजपुत्रेभ्यः पण्डितेभ्यः सुभाषितम् । अनृतं द्यूतकारेभ्यःस्त्रीभ्यः शिक्षेत कैतवम्	राजकुमारों से नम्रता एवं शालीनता, विद्वानों से अच्छे प्रिय वचन बोलना। किन्तु जुआरियों से मिथ्या भाषण और औरतों से छल करने की कला सीखनी चाहिए।

12.	**नाहारं चिन्तयेत् प्राज्ञो धर्ममेकं हि चिन्तयेत्। आहारो हि मनुष्याणां जन्मना सह जायते।।**	बुद्धिमान ज्ञानी प्राणी को अपने आहार (भोजन) के सम्बन्ध में सोच-विचार नहीं करना चाहिए। भोजन की चिन्ता से पहले तो उसे अपने धर्म की चिन्ता करनी चाहिए। क्योंकि मनुष्य के खाने का प्रबन्ध उसके जन्म के साथ ही ईश्वर कर देते हैं।
13.	**अनालोक्य व्ययं कर्ता ह्यनाथः कलहप्रियः। आतुरः सर्वक्षेत्रेषु नरः शीघ्रं विनश्यति।।**	बिना सोचे-समझे, उल्टे-सीधे खर्च करने वाले, अपने साथी न होने पर भी लड़ाई-झगड़ा करने वाले और हर प्रकार की स्त्रियों से संभोग करने वाले पुरुष यथाशीघ्र नष्ट हो जाते हैं।
14.	**जलबिन्दुनिपातेन क्रमशः पूर्यते घटः। स हेतुः सर्वविद्यानां धर्मस्य च धनस्य च ।।**	पानी की एक-एक बूंद गिरने से घड़ा भर जाता है। एक-एक बूंद मिलकर दरिया बनता है। धीरे-धीरे अभ्यास करने से हर विद्या आ जाती है। इसी प्रकार यदि आप थोड़ा-थोड़ा धन जमा करते रहें तो बहुत-सा धन आपके पास जमा हो जाएगा।
15.	**वयसः परिणामेऽपि यः खलः खल एव सः। सुपक्वमपि माधुर्यं नोपयातीन्द्रवारुणम् ।।**	ढलती आयु को देखकर भी जो प्राणी पाप करने से नहीं चूकते वे सदा दुष्ट ही बने रहते हैं। जैसे बहुत पक जाने पर भी इन्द्रायण के फल में मिठास नहीं आती, वह कड़वा ही बना रहता है।

चाणक्य नीति ॥ अथ त्रयोदशोऽध्यायः तेरहवां अध्याय ॥		
1.	मुहूर्तमपि जीवेच्च नरः शुक्लेन कर्मणा।न कल्पमपि कष्टेन लोकद्वयविरोधिना।।	जो अच्छे लोग होते हैं, वे श्रेष्ठ कर्म करते हैं। ऐसे लोगों का चिरकाल तक जीवित रहना अच्छा है। परन्तु इसके विपरीत जो लोग बुरे हैं, पापी हैं और बुरे कर्म करते हैं, उनका जीना किसी के लिए भी लाभदायक नहीं है। उनके मर जाने में ही मानवता की भलाई है।
2.	गते शोको न कर्तव्यो भविष्यं नैव चिन्तयेत् ।वर्तमानेन कालेन प्रवर्तन्ते विचक्षणाः ।।	जो बीत गया उसका शोक नहीं करना चाहिए। भविष्य की भी चिन्ता नहीं करनी चाहिए। बुद्धिमान लोगों का यह कर्तव्य है कि वे अपने काम में मन लगाकर जुट जाएं। फल एवं परिणाम की बातें सोचकर अपने वर्तमान को कष्टदायक बनाने वाले मूर्ख होते हैं।
3.	स्वभावेन हि तुष्यन्ति देवाः सत्पुरुषाः पिता।ज्ञातयः स्नानपानाभ्यां वाक्यदानेन पण्डिताः ।।	विद्वान लोग, सज्जन पुरुष और पिता यह सब स्वभाव से ही संतुष्ट होते हैं। सगे-सम्बन्धी, मित्र और पंडितजन केवल मधुर बोल से ही प्रसन्न हो जाते हैं।
4.	अहो बत विचित्राणि चरितानि महाऽऽत्मनाम् ।।लक्ष्मीं तृणाय मन्यन्ते तद्भारेण नमन्ति च ।।	महात्माओं का चरित्र भी बड़ा ही विचित्र होता है। पल में तोला-पल में माशा। वे धन को तृण (तिनके) के समान तुच्छ मानते हैं परन्तु उसके भार से नम्र हो जाते हैं।
5.	यस्य स्नेहो भयं तस्य स्नेहो दुःखस्य भाजनम् स्नेहमूलानि दुःखानि तानि त्यक्त्वा वसेत्सुखम्	जो लोग किसी से प्रेम करते हैं, उन्हें उसी से डर भी लगता है। यह प्रेम ही सब दु:खों की जड़ है। अत: प्रेम के इन बन्धनों को तोड़कर ही आप सुख पा सकते हैं।

6.	**अनागतविधाता च प्रत्युत्पन्नमतिस्तथा। द्वावेतौ सुखमेधेते यद् भविष्यो विनश्यति**	जो लोग संकट आने से पूर्व ही अपना बचाव कर लेते हैं और जिन्हें ठीक समय पर अपनी रक्षा का उपाय सूझ जाता है। ऐसे सब लोग सदा खुश रहते हैं। परंतु जो लोग सदा यही सोचकर पड़े रहते हैं कि जो भाग्य में लिखा है वही तो होगा, वे अपने जीवन को स्वयं नष्ट करते हैं।
7.	**राज्ञि धर्मिणि धर्मिष्ठाः पापे पापाः समे समाः राजानमनुवर्तन्ते यथा राजा तथा प्रजाः ।।**	राजा यदि धार्मिक होगा तो प्रजा अपने आप धर्म का पालन करेगी। यदि राजा ही पापी और निर्दयी होगा तो फिर प्रजा भी तो पाप के मार्ग पर चलेगी । प्रजा तो केवल राजा के पीछे चलती है। जैसा राजा होगा वैसी ही प्रजा होगी।
8.	**जीवन्तं मृतवन्मन्ये देहिनं धर्मवर्जितम् । मृतो धर्मेण संयुक्तो दीर्घजीवी न संशयः**	जिस प्राणी में धर्म का नाम नहीं, मैं ऐसे प्राणी को मरे के समान ही हूं। जो धर्म पर जान देते हैं, जो धर्म मार्ग पर चलकर दूसरों की भलाई के लिए सोचते हैं, ऐसे सज्जनों के दीर्घ जीवन को ही सच्चा जीवन मानता हूं , कोई भी संशय नहीं है।
9.	**धर्मार्थकाममोक्षाणां यस्यैकोऽपि न विद्यते। अजागलस्तनस्यैव तस्य जन्म निरर्थकम् ।**	जिन लोगों के जीवन में धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष इन चार पुरुषार्थों में से एक भी नहीं है, उनका जन्म तो बिल्कुल ही व्यर्थ होता है। ठीक बकरी के गले में लटके हुए स्तन की भांति जिसका कि कोई भी उपयोग नहीं होता।
10.	**दह्यमानाः सुतीव्रण नीचाः पर-यशोऽग्निना। अशक्तास्तत्पदं गन्तुं ततो निन्दां प्रकुर्वते।**	बुरे लोग दूसरों की उन्नति को देखकर जलते हैं। जब वे स्वयं उन्नति करके पीछे रह जाते हैं तो वे ऐसे गुणों की निन्दा करते हुए यही कहते हैं कि यह सब बेकार है। ऐसे काम करने से भी भला कोई लाभ है।

11.	बन्धाय विषयाऽऽसक्तं मुक्त्यै निर्विषयं मनः। मन एव मनुष्याणां कारणं बन्धमोक्षयोः ।।	बन्धन और मोक्ष का कारण केवल हमारा मन ही होता है और यदि यही मन विषय विकारों में फंसकर जीवन के लक्ष्य से भटक जाए तो प्राणी पाप के मार्ग पर चलने लगते हैं। यदि मोक्ष शांति चाहते हैं तो अपने मन से काम, लोभ-मोह, अहंकार विषय-विकारों को निकाल दें।
12.	ईप्सितं मनसः सर्वं कस्य सम्पद्यते सुखम् । दैवाऽऽयत्तं यतः सर्वं तस्मात्सन्तोषमाश्रयेत्	सारी आशाएं तो कभी किसी की भी पूरी नहीं होतीं, क्योंकि यह सब कुछ तो हमारे कर्मों पर और भाग्य पर ही निर्भर है। जैसे हमारे कर्म होंगे वैसा ही तो हमारा भाग्य होगा। जो बोएंगे वही तो काटेंगे।
13.	यथा धेनुसहस्रेषु वत्सो गच्छति मातरम् । तथा यच्च कृतं कर्म कर्तारमनुगच्छति ।	जैसे गौओं के झुंड में से भी बछड़ा अपनी मां को पहचान, सबको छोड़कर केवल अपनी मां के पास ही जाता है। उसी प्रकार इन्सान जो कर्म करता है, उसे उन ही कर्मों का फल हर हाल में भोगना पड़ता है।
14.	अनवस्थितकार्यस्य न जने न वने सुखम् । जने दहति संसर्गो वने सङ्गविवर्जनम् ।	जो लोग बुरे कर्म करते हैं, पापी हैं, उन्हें न तो इस समाज में सुख मिलता है और न ही उन्हें वनों में सुख मिलता है। इस समाज में मनुष्य का संसर्ग उन्हें जलाता रहता है और जंगलों में वह अपने एकांत से दु:खी होकर तड़पते हैं।
15.	कर्मायत्तं फलं पुंसां बुद्धिः कर्मानुसारिणी। तथापि सुधियश्चाऽऽर्याः सुविचार्यैव कुर्वते ।	प्राणी जैसा कर्म करता है, वैसा ही उसको फल मिलता है। बुद्धि भी मनुष्य के कर्मों के अनुसार चलती है। यही कारण है कि सज्जन लोग हर काम को सोच-समझकर, उसका नफा-नुकसान सोच कर ही करते हैं।
16.	यथा खात्वा खनित्रेण भूतले वारि विन्दति। तथा गुरुगतां विद्यां शुश्रूषुरधिगच्छति ।।	जैसे धरती खोदने वाले फावड़े आदि द्वारा इस धरती को खोदकर उसमें से पानी प्राप्त कर लेते हैं, वैसे ही गुरु की सेवा करने वाले विद्यार्थी गुरु से ज्ञान और बुद्धि प्राप्त करते हैं।

17.	एकाक्षरप्रदातारं यो गुरु नाभिवन्दति। श्वानयोनिशतं भुक्त्वा चाण्डालेष्व भिजायते।	जो इन्सान एकाक्षर ज्ञान को देने वाले गुरु तथा अविनाशी ईश्वर का ज्ञान देने वाले गुरु सम्मान न करके, चरणों में झुककर प्रणाम नहीं करता, ऐसा प्राणी सौ बार कुत्ते का जन्म लेकर अन्त में किसी चाण्डाल के घर में जन्म लेता है।
18.	युगान्ते प्रचलते मेरुः कल्पान्ते सप्त सागराः साधवः प्रतिपन्नार्थानं न चलन्ति कदाचन।	युग के अन्त में सुमेरु पर्वत चलायमान हो जाता है। कल्प के अन्त में सातों सागर भी अपनी मर्यादा को छोड़ देते हैं। परन्तु अच्छे लोग अपने हाथ में लिए कामों को अथवा प्रतिज्ञा को कभी नहीं तोड़ते, नहीं भूलते।
19.	सत्संगाद्भवति हि साधुता खलानां साधूनां न हि खलसङ्गमात्खलत्वम् ।आमोद कुसुम भवं मृदेव धते मृद्गन्धं न हि कुसुमानि धारयन्ति ।	सत्संग , गुणी लोगों के साथ रहकर दुष्टों के मन में भी धर्म का स्थान बन जाता है। परन्तु गुणवान और ज्ञानी लोग जब दुष्ट के साथ रहते हैं तो अपना धर्म नहीं छोड़ता जैसा कि मिट्टी फूल की गन्ध तो ग्रहण कर लेती है किन्तु फूल मिट्टी की गन्ध को कभी स्वीकार नहीं करता।
20.	दाक्षिण्यं स्वजने दया परजने शाठ्यं सदा दुर्जने प्रीतिः साधुजने स्मयः खलजने विद्वज्जने चार्जवम् । शौर्यं शत्रुजने क्षमा गुरुजने नारीजने धृष्टता । इतथ ये पुरुषाः कलासु कुशलास्तेष्वेवलोकस्थितिः ।	अपनी पत्नी से प्रेम और दयालुता, पराए लोगों पर दया, पापियों के साथ कठोरता से पेश आना, विद्वानों के साथ प्यार से बोलना, शत्रुओं के साथ शक्ति का प्रदर्शन, बड़े लोगों के साथ नम्रता का व्यवहार, औरतों पर विश्वास रखना, इस प्रकार के व्यवहार जो लोग करते हैं उन्हें ही भद्र पुरुष कहते हैं। इन भद्र पुरुषों से ही पृथ्वी टिकी हुई है।
21.	आर्तेषु विप्रेषु दयान्वितश्च यतु श्रद्धया स्वल्पमुपैति दानम् । अनन्तपारं समुपैति राजन् यद्दीयते तन्न लभेद् द्विजेभ्यः ।	दयालु व करुणायुक्त व्यक्ति दुखी वं कष्टों से त्रस्त ब्राह्मण को जो कुछ दान देता है, जो कुछ उसकी सेवा करता है वह ईश्वर की कृपा से कई गुना होकर उसे प्राप्त होता है।

22.	**हस्तौ दानविवर्जितौ श्रुतिपुटौ सारस्वत द्रोहिणी नेत्रे साधुविलोकनेन रहिते पादौ न तीर्थं गतौं। अन्यायार्जितवित्तपूर्णमुदरं गर्वेण तुंगं शिरो रे रे जम्बुक मुञ्च मुञ्च सहसा निन्द्यं सुनिन्द्यं वपुः ।**	जिन लोगों ने अपने हाथों से दान नहीं दिया, कानों से कभी वेदों को नहीं सुना, अपनी आंखों से साधु-संतों के दर्शन नहीं किए, अपने पांव से तीर्थयात्रा नहीं की, जिसके पेट में पाप की कमाई का अन्न जाता है, अभिमान से भरे अकड़कर चलते हैं, ऐसे लोगों का जीवन व्यर्थ है, अतः हे सियाररूपी प्राणियो ! ऐसे नीच और अतिस्वार्थी जीवन को जल्दी ही छोड़ दो, ऐसे गुणरहित जीवन से तो मृत्यु अच्छी है।
23.	**पत्रं नैव यदा करीलविटपे दोषो वसन्तस्य किं नोलूकोऽप्यवलोकते यदि दिवा सूर्यस्य किं दूषणम् । वर्षा नैव पतन्ति चातकमुखे मेघस्य किं दूषणं यत्पूर्वं विधिना ललाट लिखितं तन्मार्जितुं कः क्षमः ।**	यदि करील के झाड़ में पत्ते नहीं आते तो बसंत ऋतु का क्या दोष ? यदि उल्लू को दिन में नहीं दिखाई देता तो इसमें सूर्य का क्या दोष ? यदि वर्षा की बूंदें पपीहे के मुख में नहीं पड़तीं तो इसमें बादलों का क्या दोष? विधाता ने जिसके भाग्य में जो लिखा है उसको कौन मिटा सकता है?

चाणक्य नीति ॥ अथ चतुर्दशोऽध्यायः चौदहवां अध्याय ॥		
1.	उर्व्यां कोऽपि महीधरो लघुतरो दोर्भ्यां धृतो लीलया, तेन त्वांदिवि भूतले च ससतं गोवर्धनी गीयसे । त्वां त्रैलोक्यधरं वहामि कुचयोरग्रेण तद् गण्यते, किंवा केशव भाषणेन बहुनापुण्यैर्यशो लभ्यते ।।	रुक्मिणी भगवान् से कहती हैं हे केशव! आप ने एक पहाड को दोनों हाथों से उठा लिया वह इसीलिये स्वर्ग और पृथ्वी दोनों लोकों में गोवर्धनधारी कहे जाने लगे। लेकिन तीनों लोकों को धारण करनेवाले आपको मैं अपने कुचों के अगले भाग से ही उठा लेती हूँ, फिर उसकी कोई गिनती ही नहीं होती। हे नाथ! बहुत कुछ कहने से कोई प्रयोजन नहीं, यही समझ लीजिए कि बडे पुण्य से यश प्राप्त होता है।
2.	आत्मापराधवृक्षस्य फलान्येतानि देहिनाम् दारिद्र्य-रोग-दुःखानि बन्धनव्यसनानि च ।।	गरीबी, दुःख और एक बंदी का जीवन यह सब व्यक्ति के किए हुए पापो का ही फल है. मनुष्य की दरिद्रता, दुखी होना, रोगों से युक्त रहना, सांसारिक बंधन, अनेक प्रकार के व्यसन में फंसे रहना, मनुष्य के दुष्कर्मों के ही फल हैं। यहां कर्म के सिद्धांत का विवेचन करते हुए शुभ कार्य करने की प्रेरणा दी है
3.	बहूनां चैव सत्त्वानां समवायो रिपुञ्जयः । वर्षन्धाराधरो मेघस्तृणैरपि निवार्यते ।।	यदि हम बड़ी संख्या में एकत्र हो जाए तो दुश्मन को हरा सकते है. उसी प्रकार जैसे घास के तिनके एक दुसरे के साथ रहने के कारण भारी बारिश में भी क्षय नहीं होते हैं। वृक्ष की पतली-पतली शाखाएं इकट्ठी हो जाती हैं तो इन्हें शक्तिशाली हाथी के लिए तोड़ना भी कठिन हो जाता है--संघे शक्ति: कलौ युगे ।

4.	पुनर्वित्तम्पुनर्मित्रं पुनर्भार्या पुनर्मही । एतत्सर्वं पुनर्लभ्यं न शरीरं पुनः पुनः ।।	आप दौलत, मित्र, पत्नी और राज्य गवाकर वापस पा सकते है लेकिन यदि आप अपनी काया गवा देते है तो वापस नहीं मिलेगी.
5.	जलै तैलं खले गुह्यं पात्रे दानं मनागपि। प्राज्ञे शास्त्रं स्वयं याति विस्तारे वस्तुशक्तितः ।।	पानी पर तेल, दुष्ट व्यक्ति को बताया हुआ राज, सुपात्र को दिया हुआ दान और एक बुद्धिमान व्यक्ति को पढाया हुआ शास्त्रों का ज्ञान आप ही अपनी विशेषता के कारण चारों ओर फैल जाते हैं।
6.	धर्माख्याने श्मशाने च रोगिणां या मतिर्भ वेत् । सा सर्वदैव तिष्ठेच्चेत्को न मुच्येत बन्धनात् ।	वह व्यक्ति क्यों मुक्ति को नहीं पायेगा जब वह धर्म के अनुदेश को सुनता है जो उसके मन की अवस्था होती है उसे कायम रखता है.. (जब वह स्मशान घाट में होता है. जब वह बीमार होता है).
7.	उत्पन्नपश्चात्तापस्य बुध्दिर्भवति यादृशी । तादृशी यदि पूर्वं स्यात्कस्य स्यान्न महोदयः ।	वह व्यक्ति क्यों पूर्णता नहीं हासिल करेगा जो दुष्कर्म करने के बाद पश्चाताप में जो मन की अवस्था होती है, उसी अवस्था को दुष्कर्म करने से पहले ही, दुष्कर्म करते वक़्त बनाए रखेंगा
8.	दाने तपसि शौर्यं वा विज्ञाने विनये नये । विस्मयो न हि कर्तव्यो बहुरत्ना वसुन्धरा ।।	परोपकार, आत्म संयम पराक्रम शास्त्र का ज्ञान विनम्रता नीतिमत्ता का हमें अभिमान नहीं होना चाहिए क्योंकी दुनिया बहुत दुर्लभ रत्नों से भरी है.
9.	यस्य चाप्रियमिच्छेत तस्य ब्रूयात् सदा प्रियम् व्याथो मृगवधं कर्तुं गीतं गायति सुस्वरम् ।।	यदि हम किसी से कुछ पाना चाहते है तो उससे ऐसे शब्द बोले जिससे वह प्रसन्न हो जाए. उसी प्रकार जैसे एक दुष्ट शिकारी (अहित करने की इच्छा से) मधुर गीत गाता है जब वह हिरन पर बाण चलाना चाहता है.सांप को पकड़ने वाला मस्त होकर बीन बजाता है। दोनों मधुर स्वर के आकर्षण में बंधकर शिकारी के पास खुद आ जाते हैं ।

10.	**दरस्थोऽपि न दूरशो यो यस्य मनसि स्थितः** **यो यस्य हृदये नास्ति समीपस्थोऽपि दूरतः**	वह जो हमारे मन में रहता हमारे निकट है. हो सकता है की वास्तव में वह हमसे बहुत दूर हो. लेकिन वह व्यक्ति जो हमारे निकट है लेकिन हमारे मन में नहीं है वह हमसे बहोत दूर है
11.	**अत्यासन्ना विनाशाय दूरस्था न फलप्रदाः ।** **सेव्यतां मध्यभागेन राजविह्निगुरुस्त्रियः ।।**	जो व्यक्ति राजा से, अग्नि से, धर्म गुरु से और स्त्री से बहुत परिचय बढ़ाता है वह विनाश को प्राप्त होता है. जो व्यक्ति इनसे पूर्ण रूप से अलिप्त रहता है, उसे अपना भला करने का कोई अवसर नहीं मिलता. इसलिए इनसे सुरक्षित अंतर रखकर सम्बन्ध रखना चाहिए. इसी को मध्यम मार्ग कहते हैं। श्रीकृष्ण इसे 'समत्व" कहते हैं। अति वर्जित है।
12.	**अग्निरापः स्त्रियो मूर्खाः सर्पो राजकुलानि च** **नित्यं यत्नेन सेव्यानि सद्यः प्राणहराणि षट् ।**	अग्नि, पानी, औरत, मुर्ख, साप, राज परिवार के सदस्य के साथ हम बहुत सावधानी से पेश आये क्योकि इन का नित्य संपर्क हमें मौत तक पंहुचा सकते है
13.	**स जीवति गुणा यस्य यस्य धर्मः स जीवति ।** **गुणधर्मविहीनस्य जीवितं निष्प्रयोजनम् ।**	वही व्यक्ति जीवित है जो गुणवान है और पुण्यवान है. गुणों और धर्म से रहित मनुष्य का जीवन व्यर्थ है।
14.	**यदिच्छसि वशीकर्तुं जगदेकेन कर्मणा ।** **पुरः पञ्चदशास्येभ्यो गां चरन्तीं निवारय ।।**	यदि आप दुनिया को काम करके जितना चाहते हो तो पांच इन्द्रिय , पांच कर्मेन्द्रिय, इन्द्रियों के विषय को अपने काबू में रखो. पांच इन्द्रिय : (आँख, कान, नाक, जिव्हा, त्वचा) पांच कर्मेन्द्रिय (हाथ, पाँव, मुह, जननेंद्रिय, गुदा) इन्द्रियों के विषय (जो दिखाई दे, सुनाई दे; जिस में गंध हो, स्पर्श हो, स्वाद हो)

15.	प्रस्तवासदृशं वाक्यं प्रभावसदृशं प्रियम् । आत्मशक्तिसमं कोपं यो जानाति स पण्डितः ।।	वही पंडित है जो वही बात बोलता है जो प्रसंग के अनुकूल .अनुरूप हो. जो अपनी शक्ति के अनुरूप दुसरो की प्रेम से सेवा करता है. जिसे अपने क्रोध की मर्यादा का पता है.
16.	एक एव पदार्थस्तु त्रिधा भवति वीक्षितः । कुणपंकामिनी मांसं योगिभिः कामिभिः श्वभिः ।।	एक ही वस्तु देखने वालो की योग्यता के अनुरूप बिलग बिलग दिखती है. तप करने वाले में वस्तु को देखकर कोई कामना नहीं जागती. लम्पट आदमी को हर वास्तु में स्त्री दिखती है. कुत्ते को हर वस्तु में मांस दिखता है. 'जैसी दृष्टि, वैसी सृष्टि'
17.	सुसिध्दमौषधं धर्मं गृहच्छिद्रं च मैथुनम् ।कुभुक्तं कुश्रुतं चैव मतिमान्न प्रकाशयेत् ।।	जो व्यक्ति बुद्धिमान है वह निम्न लिखित बाते किसी को ना बताये. वह औषधि उसने कैसे बनायीं जो अच्छा काम कर रही है. परोपकार जो उसने किया, उसके घर के झगडे, उसकी पत्नी के साथ होने वाली व्यक्तिगत बाते. उसने जो ठीक से न पका हुआ खाना खाया. जो गालिया उसने सुनी.
18.	तावन्मौनेन नीयन्ते कोकिलैश्चैव वासराः ।यावत्सर्वजनानन्ददायिनी वाक् प्रवर्तते ।।	कोकिल तब तक मौन रहते है. जबतक वो मीठा गाने की क़ाबलियत हासिल नहीं कर लेते और सबको आनंद नहीं पंहुचा सकते. भावार्थ है कि व्यक्ति को बड़े धैर्य से सही समय की प्रतीक्षा करनी चाहिए।
19.	धर्मं धनं च धान्यं च गुरोर्वचनमौषधम् ।सुगृहीतं च कर्त्तव्यमन्यथा तु न जीवति ।।	हम जो प्राप्त करे और उसे सम्भाल कर संग्रह करता रहे। पुण्य कर्म से मिला आशीर्वाद, धन, अनाज, वो शब्द जो हमने हमारे अध्यात्मिक गुरु की कही हुई बातें. कम पायी जाने वाली अनेक प्रकार की उपयोगी औषधियां हम ऐसा नहीं करते है तो जीना मुश्किल हो जाएगा.

20.	**त्यज दुर्जनसंसर्गं भज साधुसमागमम् । कुरु पुण्यमहोरात्रं स्मर नित्यमनित्यतः ।।**	कुसंग का त्याग करे और संत जानो से मेलजोल बढाए. दिन और रात गुणों का संपादन करे. उसपर हमेशा चिंतन करे जो शाश्वत है और जो अनित्य है उसे भूल जाए. (नैतिकता का सार-संक्षेप)
21.	**पृथिव्यां त्रीणि रत्नानि जलमन्नं सुभाषितम् ।मूढः पाषाणखण्डेषु रत्नसंज्ञा विधीयते ।।**	इस धरती पर पानी, अन्न और सूक्तियां, ये तीन ही रत्न प्राणी के लिए हैं। परन्तु जो लोग मूर्ख हैं, अज्ञानी हैं, वे हर पत्थर के टुकड़ों को हीरा समझते हैं।

चाणक्य नीति ॥ अथ पंचदशोऽध्यायः पंद्रहवां अध्याय ॥		
1.	यस्य चितं द्रवीभूतं कृपया सर्वजन्तुषु । तस्य ज्ञानेन मोक्षेण किं जटाभस्मलेपनैः ।।	वह व्यक्ति जिसका हृदय हर प्राणी मात्र के प्रति करुणा से पिघलता है. उसे जरुरत क्या है किसी ज्ञान की, मुक्ति की, सर के ऊपर जटाजूट रखने की और अपने शारीर पर राख मलने की. जिस व्यक्ति के मन में प्राणियों के कष्टों को देखकर दया के भाव आते हैं, उसे ज्ञान प्राप्त करने और मोक्ष प्राप्त करने के लिए तप करने की आवश्यकता नहीं है।
2.	एकमेवाक्षरं यस्तु गुरुः शिष्यं प्रबोधयेत् । पृथिव्यां नास्ति तद्द्रव्यं यद् दत्त्वा चानृणी भवेत् ।।	इस दुनिया में वह खजाना नहीं है जो आपको आपके सदगुरु ने ज्ञान का एक अक्षर दिया उसके कर्जे से मुक्त कर सके.
3.	खलानां कण्टकानां च द्विविधैव प्रतिक्रिया उपानद् मुखभङ्गो वा दूरतैव विसर्जनम् ।।	काटो से और दुष्ट लोगो से बचने के, व्यवहार करने के दो उपाय है. यदि शक्ति है, तो उसे कुचल दें, अन्यथा उससे बचकर निकल जाएं।
4.	कुचैलिनं दन्तमलोपधारिणां बह्वाशिनं निष्ठुर भाषिणां च । सूर्योदये वाऽस्तमिते शयानं विमुञ्चति श्रीर्यदि चक्रपाणिः ।।	जो अस्वच्छ कपडे पहनता है. जिसके दात साफ़ नहीं. जो बहोत खाता है. जो कठोर शब्द बोलता है. जो सूर्योदय के बाद उठता है. उसका व्यक्तित्व कितना भी बड़ा हो, वह लक्ष्मी की कृपा से वंचित रहजायेगा.
5.	त्यजन्ति मित्राणि धनैर्विहीनं दाराश्च भृत्याश्च सुहृज्जनाश्च । तं चार्थवन्तं पुनराश्रयन्ते ह्यर्थो हि लोके पुरुषस्य बन्धुः ।।	जब व्यक्ति दौलत खोता है तो उसके मित्र, पत्नी, नौकर, सम्बन्धी उसे छोड़कर चले जाते है. और जब वह दौलत वापस हासिल करता है तो ये सब लौट आते है. इसीलिए दौलत ही सबसे अच्छा बन्धु है.

6.	**अन्यायोपार्जितं द्रव्यं दश वर्षाणि तिष्ठति । प्राप्ते एकादशे वर्षे समूलं च विनश्यति ।।**	पाप से कमाया हुआ पैसा दस साल रह सकता है. ग्यारवे साल में वह लुप्त हो जाता है, उसकी मुद्दल के साथ.
7.	**अयुक्तं स्वामिनो युक्तं युक्तं नीचस्य दूषणम्। अमृतं राहवे मृत्युर्विषं शंकर भूषणम् ।।**	एक महान आदमी जब कोई गलत काम करता है तो उसे कोई कुछ नहीं कहता. एक नीच आदमी जब कोई अच्छा काम भी करता है तो उसका धिक्कार होता है. राहू की मौत अमृत पीने से ही हुई. भगवान् शंकर ने जब विष पीया तो उनके गले का अलंकार हो गया.
8.	**तद्भोजनं यद् द्विजभुक्तशेषं तत्सौहृदं यत्क्रियते परस्मिन्। सा प्राज्ञता या न करोति पापं दम्भं विना यः क्रियते पापं, दम्भं विना यः क्रियते स धर्मः ।।**	एक सच्चा भोजन वह है जो ब्राह्मण को देने के बाद शेष है. प्रेम वह सत्य है जो दुसरो को दिया जाता है. खुद से जो प्रेम होता है वह नहीं. वही बुद्धिमत्ता है जो पाप करने से रोकती है. वही दान है जो बिना दिखावे के किया जाता है. अपनों से किया जाने वाला प्रेम पूर्णतया व्यावहारिक है। प्रेम जिससे पराये अपने बन जाएं-सही अर्थों में प्रेम है।
9.	**मणिर्लुण्ठति पादाग्रे काचः शिरसि धार्यते । क्रय विक्रयवेलायां काचः काचो मणिर्मणिः ।।**	यदि आदमी को परख नहीं तो वह अनमोल रत्नों को तो पैर की धुल में रखता है और घास को सर पर धारण करने से रत्नों का मूल्य कम नहीं होता परंतु जब मूल्यांकन का समय आता है तो उनकी वास्तविक स्थिति का पता लग ही जाता है।
10.	**अनन्तंशास्त्रं बहुलाश्च विद्याः अल्पं च कालो बहुविघ्नता च । यत्सारभूतं तदुपासनीयं, हंसो यथा क्षीरमिवम्बुमध्यात् ।।**	शास्त्रों का ज्ञान अगाध है. वो कलाए अनंत जो हमें सीखनी छाहिये. हमारे पास समय थोडा है. जो सिखने के मौके है उसमे अनेक विघ्न आते है. इसीलिए वही सीखे जो अत्यंत महत्वपूर्ण है. उसी प्रकार जैसे हंस पानी छोड़कर उसमे मिला हुआ दूध पी लेता है.

11.	**दूरागतं पथि श्रान्तं वृथा च गृहमागतम् । अनर्चयित्वा यो भुङ्क्ते स वै चाण्डाल उच्यते ।**	वह आदमी चंडाल है जो एक दूर से अचानक आये हुए थके मांदे अतिथि को आदर सत्कार दिए बिना रात्रि का भोजन खुद खाता है. वेद --अतिथि देवो भव! गृहस्थ को चाहिए कि दूर से चलकर आने वाले अतिथि का वह आदर-सत्कार करे। सम्मान और श्रद्धा का पात्र बने
12.	**पठन्ति चतुरो वेदान् धर्मशास्त्राण्यनेकशः । आत्मानं नैव जानन्ति दवी पाकरसं यथा ।।**	एक व्यक्ति को चारो वेद और सभी धर्म शास्त्रों का ज्ञान है. लेकिन उसे यदि अपने आत्मा की अनुभूति नहीं हुई तो वह उसी चमचे के समान है जिसने अनेक पकवानों को हिलाया लेकिन किसी का स्वाद नहीं चखा. अध्ययन की सार्थकता- शास्त्रों के सार ग्रहण करके जीवन में उतारे।
13.	**धन्या द्विजमयि नौका विपरीता भवार्णवे । तरन्त्यधोगताः सर्वे उपरिस्थाः पतन्त्यधः ।।**	धन्य अथवा, ऊँचे उठे गृहस्थ व्यक्ति , ब्राह्मणों के साथ नम्र रहकर उनकी सेवा करते रहते हैं, उनका संसार समुद्र को पार करते हुए तो उद्धार हो जाता है और जो अभिमान में चूर रहकर उनका अपमान करते हैं, उनकी सदैव अधोगति ही होती है।
14.	**पीतः क्रुध्देन तातश्चरणतलहता वल्लभो येन रोषा-दाबाल्याद्विप्रवर्यैः स्ववदनविवरे धार्य ते वैरिणी में । गेहं मे छेदयन्ति प्रतिदिवस मुमाकान्तपूजानिमित्तं तस्मात्खिन्नासदा त्हंद्विजकुलनिलयं नाथ युक्तं त्यजामि ।**	हे भगवान् विष्णु, मेरे स्वामी, मै ब्राह्मणों के घर में इस लिए नहीं रहती क्यों की. अगस्त्य ऋषि ने गुस्से में समुद्र (मेरे पिता) को पी लिया. भृगु मुनि ने आपकी छाती पर लात मारी. ब्राह्मणों को पढने में बहोत आनंद आता है और वे सरस्वती (मेरी स्पर्धक) की हरदम कृपा चाहते है. और वे रोज कमल के फूल को जो मेरा निवास है जलाशय से निकलते है और भगवान् शिव की पूजा करते है.

15.	**अयम मृतनिधानं नायको&प्यौषधीनां अमृतमयशरीरः कान्तियुक्तोऽपि चन्द्रः। भवति विगतरश्मिर्मण्डलं प्राप्य भानोः परसदननिविष्टः को लघुत्वं न याति।।**	चन्द्रमा जो अमृतमयशरीर वाला और दैदीप्यमान, अमृत से भरा, औषधियों की देवता माना जाता है, है. जब वह सूर्य के घर जाता है.उसका क्या हश्र होता है तो क्या एक सामान्य आदमी दुसरे के घर जाकर लघुता को नहीं प्राप्त होगा. निजी स्वार्थ की पूर्ति के उद्देश्य से मार्ग का परित्याग न करे ।
16.	**अलिरयं नलिनीदलमध्यगः कमलिनीमकरन्दमदालसः । विधिवशात्परदेशमुपागतः कुटजपुष्परसं बहु मन्यते ।।**	यह मधु मक्खी जो कमल की नाजुक पंखडियो में बैठकर उसके मीठे मधु का पान करती थी, वह अब एक सामान्य कुटज के फूल पर अपना ताव मारती है. क्यों की वह ऐसे देश में आ गयी है जहा कमल है ही नहीं, उसे कुटज के पराग ही अच्छे लगते है. उसे चाहिए कि वह स्वयं को समय के अनुसार ढाले
17.	**बंधनानि खलु सन्ति बहूनि प्रेमरज्जुकृत बन्धनमन्यत् । दारुभेदनिपुणोऽपिषण्ड घ्रिर्निष्क्रियोभवति पंकजकोशे ।।**	संसार में मनुष्य अनेक प्रकार के बंधनों में बंधा हुआ है, परंतु सबसे मजबूत बंधन प्रेम का होता है, जिस प्रकार कमल की कोमल पंखुड़ियों में बंद हो जाने पर भौंरा प्रेमवश उन्हें काट नहीं पाता, इसी प्रकार मनुष्य प्रेम के पाश में बंधा हुआ सब कष्ट उठाने के लिए तैयार होता है
18.	**छिन्नोऽपि चंदनतरुर्न जहाति गन्धं वृध्दोऽपि वारणपतिर्न जहाति लीलाम् । यंत्रार्पितो मधुरतां न जहाति चेक्षुः क्षीणोऽपि न त्यजति शीलगुणान् कुलीनः ।।**	चन्दन कट जाने पर भी अपनी महक नहीं छोड़ते. हाथी बुढा होने पर भी अपनी लीला नहीं छोड़ता. गन्ना निचोड़े जाने पर भी अपनी मिठास नहीं छोड़ता. उसी प्रकार ऊँचे कुल में पैदा हुआ व्यक्ति अपने उन्नत गुणों को नहीं छोड़ता भले ही उसे कितनी भी गरीबी में क्यों ना बसर करना पड़े.

चाणक्य नीति ॥ अथ षोडशोऽध्यायः सोलहवां अध्याय ॥		
1.	न ध्यातं पदमी श्वरस्य विधिवत्संसारविच्छि त्तये स्वर्गद्वारकपाटपाटनपटुर्धर्मोंsपि नोपार्जितः । नारीपीनपयोधरोरुयुगल स्वप्रेडपि नालिंगितं मातुः केवलमेव यौवनवनच्छेदे कुठारा वयम्।।	जिस मनुष्य ने संसाररूपी जाल को काटने के लिए प्रभु के स्वरूप का ध्यान नहीं किया, जिसने स्वर्ग के द्वार खोलने के लिए धर्मरूपी धन का संग्रह नहीं किया, जिसने स्वप्न में भी नारी के सुंदर स्तनों और जंघाओं का आलिंगन नहीं किया, वह माता के यौवनरूपी वृक्ष को काटने वाले कुल्हाड़े का काम करता है। धर्म, अर्थ, काम--इन तीनों पुरुषार्थों के लिए ही तो प्रयास किया जा रहा है।
2.	कोऽर्थान्प्राप्य न गर्वितो विषयिणः कस्याप-दोऽस्तंगताः।स्त्रीभिः कस्य न खण्डितं भुवि मनः को नाम राज्ञप्रियः। कः कालस्य न गोचरत्वमगमत् कोऽर्थो गतो गौरवम्। को वा दुर्जनदुर्गुणेषु पतितः क्षेमेण यातः पथि।	संसार में ऐसे व्यक्ति बहुत कम होते हैं, जो धनवान होने पर भी अभिमानरहित और नम्र बने रहते हैं। संसार में ऐसा कोई व्यक्ति नहीं है, जो विषय भोगों में लिप्त होने के बाद कष्टों में न फंसा हो। किस आदमी ने दुष्ट के दुर्गुण पाकर सुख को प्राप्त किया
3.	गुणाः सर्वत्र पूज्यन्ते न महत्योऽपि सम्पदः । पूर्णेन्दु किं तथा वन्द्यो निष्कलङ्को यथा कुशः ।।	गुणों की ही सर्वत्र पूजा होती है, गुणी व्यक्ति का ही सभी सम्मान करते हैं चाहे उसके पास धन कम हो| पूर्णिमा का चन्द्रमा पूर्ण होता है, सबसे ज्यादा रोशनी देता है, लेकिन उसकी कोई पूजा नहीं करता क्योंकि उसमें दाग होता है| लेकिन दूज के चन्द्रमा की सभी पूजा करते हैं क्योंकि उसमें कोई दाग नहीं होता|

4.	**जल्पन्ति सार्धमन्येन पश्यन्त्यन्यं सविभ्रमाः हृदये चिन्तयन्तयन्यं न स्त्रीणामेकतो रतिः ।**	स्त्री की किसी एक से प्रीति नहीं होती। वे बातचीत तो किसी अन्य व्यक्ति से करती हैं, परंतु हाव-भाव पूर्वक देखती किसी अन्य व्यक्ति को हैं और अपने हृदय में चिंतन किसी अन्य व्यक्ति का करती हैं।
5.	**यो मोहयन्मन्यते मूढो रत्तेयं मयि कामिनी । स तस्य वशगो भूत्वा नृत्येत् क्रीडा शकुन्तवत्।**	मुर्ख को लगता है की वह हसीन लड़की उसे प्यार करती है. वह उसका गुलाम बन ,उसके इशारो पर नाचता है. वास्तविकता यह है कि स्त्री के छल-कपट से मनुष्य के व्यक्तित्व एवअस्तित्व दोनों समाप्त हो जाते हैं।
6.	**न निर्मितः केन न दृष्टपूर्वः न श्रूयते हेममयः कुरंगः। तथाऽपि तृष्णा रघुनन्दनस्य विनाशकाले विपरीतबुद्धिः।**	आज तक न तो सोने के मृग की रचना हुई है और न ही किसी ने सोने का मृग देखा है, फिर भी श्रीरामचन्द्र स्वर्ण मृग को पकड़ने के लिए उतावले हो गए। यह बात ठीक ही है कि जब मनुष्य के बुरे दिन आते हैं, तो उसकी बुद्धि उल्टी बातें सोचने लगती है।
7.	**गुणैरुत्तमतां यान्ति नोच्चैरासनसंस्थितैः । प्रसादशिखरस्थोऽपि किं काको गरुडायते**	व्यक्ति को महत्ता उसके गुण प्रदान करते है वह जिन पदों पर काम करता है सिर्फ उससे कुछ नहीं होता. क्या आप एक कौवे को गरुड़ कहेंगे यदि वह एक ऊँची ईमारत के छत पर जाकर बैठता है.
8.	**परमोक्तगुणो यस्तु निर्गुणोऽपि गुणी भवेत् इन्द्रोऽपि लघुतां याति स्वयं प्रख्यापितैर्गुणैः**	जो व्यक्ति गुणों से रहित है लेकिन जिसकी लोग सराहना करते है वह दुनिया में काबिल माना जा सकता है. लेकिन जो आदमी खुद की ही डींगें हाँकता है वह अपने आप को दूसरे की नज़रों में गिराता है भले ही वह स्वर्ग का राजा इंद्र हो

9.	विवेकिनमनुप्राप्तो गुणो याति मनोज्ञताम् । सुतरां रत्नमाभाति चामीकरनियोजितम् ।	जिस प्रकार सोने के आभूषण में जड़ा हुआ रत्न और भी सुंदर दिखाई देता है, उसी प्रकार व्यक्ति को चाहिए कि विवेकपूर्वक अपने में गुणों का विकास करके अपने व्यक्तित्व को और भी अधिक सुंदर बनाए तथा सदैव गुणों को ग्रहण करे।
10.	गुणं सर्वत्र तुल्योऽपि सीदत्येको निराश्रयः । अनर्घ्यमपि माणिक्यं हेमाश्रयमपेक्षते ।।	गुणों में सर्वज्ञ-परमात्मा के समान होने पर भी निराश्रित व्यक्ति भी एक ऐसा रत्न जो प्रज्वलित है और सोने के अलंकर में मढने पर और चमकता है.
11.	अतिक्लेशेन ये चार्थाः धर्मस्यातिक्रमेण तु । शत्रूणां प्रणिपातेन ते ह्यर्थाः न भवन्तु मे ।	वह व्यक्ति जो सर्व गुण संपन्न है अपने आप को सिद्ध नहीं कर सकता है जबतक उसे समुचित संरक्षण नहीं मिल जाता. उसी प्रकार जैसे एक मणि तब तक नहीं निखरता जब तक उसे आभूषण में सजाया ना जाए
12.	किं तया क्रियते लक्ष्मया या वधूरिव केवला या तु वेश्यैव सामान्यपथिकैरपि भुज्यते ।	मुझे वह दौलत नहीं चाहिए जिसके लिए कठोर यातना सहनी पड़े, या सदाचार का त्याग करना पड़े या अपने शत्रु की चापलूसी करनी पड़े
13.	धनेषु जीवितव्येषु स्त्रीषु चाहारकर्मषु । अतृप्ता प्राणिनः सर्वे याता यास्यन्ति यान्ति च।	जो अपनी दौलत, पकवान और औरते भोगकर संतुष्ट नहीं हुए ऐसे बहोत लोग पहले मर चुके है. अभी भी मर रहे है - भविष्य में भी मरेंगे. भाव यह है -धन संतुष्टि देगा तो केवल परोपकार में लगकर।
14.	क्षीयन्ते सर्वदानानि यज्ञहोमबलि क्रियाः । न क्षीयते पात्रदानम भयं सर्वदेहिनाम् ।।	सभी परोपकार और तप तात्कालिक लाभ देते है. लेकिन सुपात्र को जो दान दिया जाता है और सभी जीवो को जो संरक्षण प्रदान किया जाता है उसका पुण्य कभी नष्ट नहीं होता.

15.	**तृणं लघु तृणात्तूलं तूलादपि च याचकः । वायुना किं न जीतोऽसौ मामयं याचयिष्यति**	घास का तिनका हल्का है. कपास उससे भी हल्का है. भिखारी तो अनंत गुना हल्का है. फिर हवा का झोका उसे उड़ाके क्यों नहीं ले जाता. क्योकि वह डरता है कही वह भीख न मांग ले.
16.	**वरं वनं व्याघ्रगजेन्द्र सेवितं द्रुमालयं पक्कफ लाम्बुसेवनं ।तृणेषु शय्या शतजीर्णवल्कलं न बन्धुमध्ये धनहीन जीवनम् ।**	बेइज्जत होकर जीने से अच्छा है की मर जाए. मरने में एक क्षण का दुःख होता है पर बेइज्जत होकर जीने में हर रोज दुःख उठाना पड़ता है.
17.	**प्रियवाक्यप्रदानेन सर्वे तुष्यन्ति मानवाः । तस्मात् तदेव वक्तव्यं वचने का दरिद्रता ।**	सभी जीव मीठे वचनों से आनंदित होते है. इसीलिए हम सबसे मीठे वचन कहे. मीठे वचन की कोई कमी नहीं है.
18.	**संसार कटु वृक्षस्य द्वे फले ह्यमृतोपमे । सुभाषितं च सुस्वादुः सङ्गति सज्जने जने ।।**	इस दुनिया के वृक्ष को दो मीठे फल लगे है. मधुर वचन और सत्संग.
19.	**जन्मजन्मनि चाभ्यस्तं दानमध्ययनं तपः । तेनैवाभ्यासयोगेन देहि वाऽभ्यस्यते ।।**	पहले के जन्मो की अच्छी आदते जैसे दान, विद्यार्जन और तप इस जनम में भी चलती रहती है. क्योकि सभी जनम एक श्रृंखला से जुड़े है.
20.	**पुस्तकेषु च या विद्या परहस्तेषु च यद्धनम् । उत्पन्नेषु च कार्येषु न सा विद्या न तद्धनम् ।।**	जिसका ज्ञान किताबो में सिमट गया है और जिसने अपनी दौलत दुसरो के सुपुर्द कर दी है वह जरुरत आने पर ज्ञान या दौलत कुछ भी इस्तमाल नहीं कर सकता

चाणक्य नीति ॥ अथ सप्तदशोऽध्यायः सत्रहवां अध्याय ॥		
1.	लोभश्चेदगुणेन किं पिशुनता यद्यस्ति किं पातकैः, सत्यं यत्तपसा च किं शुचिमनो यद्यस्ति तीर्थेन किम् । सौजन्यं यदि किं गुणैः सुमहिमा यद्यस्ति किं मण्डनैः सद्विद्या यदि किं धनैरपयशौ यद्यस्ति किं मृत्युना ।	लोभ से बड़ा दुर्गुण, परनिंदा से बड़ा पाप क्या हो सकता है, जो सत्य में प्रस्थापित है उसे तप करने की क्या जरूरत है. जिसका ह्रदय शुद्ध है उसे तीर्थ यात्रा की क्या जरूरत है. यदि स्वभाव अच्छा है तो और किस गुण की जरूरत है. यदि कीर्ति है तो अलंकार की क्या जरुरत है. यदि व्यवहार ज्ञान है, यदि उत्तम विद्या है तो उसे किसी अन्य धन की क्या आवश्यकता है. यदि अपमान हुआ है तो मृत्यु से भयंकर नहीं है क्या.
2.	पुस्तकं प्रत्याधीतं नाधीतं गुरुसन्निधौ । सभामध्ये न शोभन्ते जारगर्भा इव स्त्रियः ।	वह विद्वान जिसने असंख्य किताबो का अध्ययन बिना सदगुरु के आशीर्वाद से कर लिया वह विद्वानों की सभा में एक सच्चे विद्वान के रूप में नहीं चमकता है. उसी प्रकार जिस प्रकार एक नाजायज औलाद को दुनिया में कोई प्रतिष्ठा हासिल नहीं होती भाव यह है कि गुरु से ही ज्ञान, ज्ञान के सब रहस्य की प्राप्ति होती है।
3.	कृते प्रतिकृतिं कुर्यात् हिंसेन प्रतिहिंसनम् ।तत्र दोषो न पतति दुष्टे दौष्ट्यं समाचरेत् ।	हमें दुसरो से जो मदद प्राप्त हुई है उसे हमें लौटना चाहिए. उसी प्रकार यदि किसीने हमसे यदि दुष्टता की है तो हमें भी उससे दुष्टता करनी चाहिए. ऐसा करने में कोई पाप नहीं है
4.	यद् दूरं यद् दुराराध्यं यच्च दूरे व्यवस्थितम् ।तत्सर्वं तपसा साध्यं तपो हि दुरतिक्रमम् ।	वह चीज जो दूर दिखाई देती है, जो असंभव दिखाई देती है, जो हमारी पहुच से बहार दिखाई देती है, तप अथवा परिश्रम द्वारा असंभव कार्यों को भी संभव बनाया जा सकता है।

5.	**पिता रत्नाकरो यस्य लक्ष्मीर्यस्य सहोदरी ।** **शङ्खो भिक्षाटनं कुर्यान्न दत्तमुपतिष्ठति ।।**	समुद्र ही सभी रत्नों का भण्डार है. वह शंख का पिता है. देवी लक्ष्मी शंख की बहन है. लेकिन दर दर पर भीख मांगने वाले हाथ में शंख ले कर घूमते है. इससे यह बात सिद्ध होती है की उसी को मिलेगा जिसने पहले दिया है. प्रत्येक व्यक्ति का कर्तव्य है कि वह अच्छे कुल में उत्पन्न होने पर भी दान आदि शुभकर्म करता रहे।
6.	**अशवतस्तुभवेत्साधुर्ब्रह्मचारी च निर्धनः ।** **व्याधिष्ठो देवभक्तश्च वृद्धा नारी पतिव्रता ।।**	जब आदमी में शक्ति नहीं रह जाती वह साधू हो जाता है. जिसके पास दौलत नहीं होती वह ब्रह्मचारी बन जाता है. रुग्ण भगवान् का भक्त हो जाता है. बूढी औरत पति के प्रति समर्पित हो जाती है. भाव यह है कि व्यक्ति विवशता के कारण भी अपना स्वरूप बदल लेता है,
7.	**नाऊन्नोदकसमं दान न तिथिर्द्वादशी समा।** **न गायत्र्याः परो मन्त्रो न मातुः पर दैवतम्।।**	अन्न और जल के समान कोई श्रेष्ठ दान नहीं, द्वादशी को किया हुआ पुण्य कर्म के समान कोई श्रेष्ठ नहीं, गायत्री से बढ़कर कोई सर्वश्रेष्ठ मंत्र नहीं और माता से बढ़कर कोई देवता नहीं। माता संतान को प्रत्यक्ष और परोक्षरूप से संस्कारित करती है।
8.	**तक्षकस्य विषं दन्ते मक्षिकाया मुखे विषम् ।** **वृश्चिकस्य विषं पुच्छे सर्वाङ्गे दुर्जने विषम् ।**	साप के दंश में विष होता है. कीड़े के मुह में विष होता है. बिच्छू के डंख में विष होता है. लेकिन दुष्ट व्यक्ति तो पूर्ण रूप से विष से भरा होता है.
9.	**न दानैः शुध्यते नारी नोपवासशतैरपि ।** **न तीर्थसेवया तद्वद् भतुः पादोदकैर्यथा ।।**	स्त्री दान दे कर, उपवास रख कर और पवित्र जल का पान करके पावन नहीं हो सकती. वह पति के चरणों को धोने से और ऐसे जल का पान करने से शुद्ध होती है भाव यह है कि स्त्री का सबसे प्रथम कर्तव्य पारिवारिक कर्तव्यों का निर्वाह है।

10.	पत्युराज्ञां विना नारी उपोष्य व्रतचारिणी । आयुष्य हरते भर्तुः सा नारी नरकं व्रजेत् ।	जो स्त्री अपने पति की सम्मति के बिना व्रत रखती है और उपवास करती है, वह उसकी आयु घटाती है और खुद नरक में जाती है
11.	दानेन पाणिर्न तु कङ्कणेन, स्नानेन शुद्धिर्न तु चन्दनेन । मानेन तृप्तिर्न तु भोजनेन, ज्ञानेन मुक्तिर्न तु मण्डनेन ।।	एक हाथ की शोभा गहनों से नहीं दान देने से है. चन्दन का लेप लगाने से नहीं जल से नहाने से निर्मलता आती है. एक व्यक्ति भोजन खिलाने से नहीं सम्मान देने से संतुष्ट होता है. मुक्ति खुद को सजाने से नहीं होती, अध्यात्मिक ज्ञान को जगाने से होती है.
12.	सद्यः प्रज्ञाहरा तुण्डी सद्यः प्रज्ञाकरी वचा । सद्यः शक्तिहरा नारी सद्यः शक्तिकरं पयः।	टुंडी फल खाने से आदमी की समझ खो जाती है. वच मूल खिलाने से लौट आती है. औरत के कारण आदमी की शक्ति खो जाती है, दूध से वापस आती है
13.	परोपकरणं येषां जागर्ति हृदये सताम्। नश्यन्ति विपदस्तेषां सम्पदः स्युः पदे पदे।।	जिन सज्जन लोगों के दिल में दूसरों का उपकार करने की भावना जाग्रत रहती है, उनकी विपत्तियां नष्ट हो जाती हैं और पग-पग पर उन्हें धन-संपत्ति की प्राप्ति होती है।
14.	नापितस्य गृहे क्षौरं पाषाणे गन्धलेपनम् आत्मरूपं जले पश्यन् शक्रस्यापि श्रियं हरेत्	जिसमे सभी जीवो के प्रति परोपकार की भावना है वह सभी संकटों पर मात करता है,उसे हर कदम पर सभी प्रकार की सम्पन्नता मिलती है
15.	यदि रामा यदि च रमा यदि तनयो विनय गुणोपेतः । तनयो तनयोत्पत्तिः सुरवरनगरे किमाधिक्यम् ।	वह इंद्र के राज्य में जाकर क्या सुख भोगेगा.... जिसकी पत्नी प्रेमभाव रखने वाली और सदाचारी है. जिसके पास में संपत्ति है. जिसका पुत्र सदाचारी और अच्छे गुण वाला है. जिसको अपने पुत्र द्वारा पौत्र हुए है.
16.	आहारनिद्रा भय मैथुरानि, समानि चैतानि नृणां पशूनाम्। ज्ञाने नराणामधिको विशेषो, ज्ञानेन हीना पशुभिः समानाः ।	मनुष्यों में और निम्न स्तर के प्राणियों में खाना, सोना, घबराना और गमन करना समान है. मनुष्य अन्य प्राणियों से श्रेष्ठ है तो विवेक ज्ञान की बदौलत. इसलिए जिन मनुष्यों में ज्ञान नहीं है वे पशु है

17.	दानार्थिनो मधुकरा यदि कर्णतालै दूरीकृता करिवरेण मदान्धबुद्धया। तस्यैव गण्डयुग मण्डनहानिरेव भृङ्गाः पुनर्विकचपद्मवने वसन्ति ।	यदि मद मस्त हाथी अपने माथे से टपकने वाले रस को पीने वाले भौरों को कान हिलाकर उड़ा देता है, तो भौरों का कुछ नहीं जाता, वे कमल से भरे हुए तालाब की ओर ख़ुशी से चले जाते है. हाथी के माथे का शृंगार कम हो जाता है - याचक का सम्मान करके उसको दक्षिणा दें
18.	राजा वेश्या यमश्चाग्निः चौराः बालक याचकाः । परदुःखं न जानन्ति अष्टमो ग्रामकण्टकः ।	ये आठो दुसरो का दुःख नहीं समझ सकते-राजा, वेश्या, यमराज, अग्नि, चोर, छोटा बच्चा, भिखारी, कर वसूलने वाला.
19.	अधः पश्यसि किं बाले पतितं तव किं भुवि । रे रे मूर्ख न जानासि गतं तारुण्यमौक्तिकम्	हे बाला, तुम निचे झूककर क्या देख रही हो? क्या तुम्हारा कुछ जमीन पर गिर गया है? हे मुर्ख, इस संसार में जिसने जन्म लिया है, वह बचपन, किशोर और युवावस्था के बाद वृद्धावस्था को प्राप्त होता है,
20.	व्यालाश्रयाऽपि विफलापि सकण्टकाऽपि। वक्राऽपि पङ्किल-भवाऽपि दुरासदाऽपि। गन्धेन बन्धुरसि केतकि सर्वजन्तोर् एको गुणः खलु निहन्ति समस्तदोषान्।	हे केतकी पुष्प! तुममे तो कीड़े रहते है. तुमसे ऐसा कोई फल भी नहीं बनता जो खाया जाय. तुम्हारे पत्ते काटो से ढके है. तुम टेढ़े होकर बढ़ते हो. कीचड़ में खिलते हो. कोई तुम्हे आसानी से पा नहीं सकता. लेकिन तुम्हारी अतुलनीय खुशबु के कारण दुसरे पुष्पों की तरह सभी को प्रिय हो. इसीलिए एक ही अच्छाई अनेक बुराइयों पर भारी पड़ती है.

चार्वाक		
1.	**यावत् जीवेत्सुखं जीवेत् ऋणं कृत्वा घृतं पिबेत्, भस्मीभूतस्य देहस्य पुनरागमनं कुतः, त्रयोवेदस्य कर्तारौ भण्डधूर्तनिशा चराः**	मनुष्य जब तक जीवित रहे तब तक सुखपूर्वक जिये । ऋण करके भी घी पिये । अर्थात् सुख-भोग के लिए जो भी उपाय करने पड़ें उन्हें करे । परलोक, पुनर्जन्म और आत्मा-परमात्मा जैसी बातों की परवाह न करे । भला जो मृत्यु पश्चात् भष्मीभूत हो जाए, उसके पुनर्जन्म का सवाल ही कहां उठता है ।
2.	**जडभूतविकारेषु चैतन्यं यत्तु दृश्यते, ताम्बूल पूगचूर्णानां योगाद् राग इवोत्थितम्**	जिस प्रकार पान के पत्ते तथा सुपाड़ी के चूर्ण के संयोग से लाल रंग होंठों पर छा जाता है, चेतनाशून्य घटक तत्वों के परस्पर संयोग से चेतना की उत्पत्ति होती है । यानी चेतना या आत्मा किसी अभौतिक की विद्यमानता से नहीं आती है । विभिन्न पदार्थों के सेवन से चेतना की तीव्रता कम-ज्यादा होती है । स्पष्ट है -पदार्थ ही चेतना के कारण हैं ।
3.	**चारुः लोकसम्मतो वाको वाक्यं यस्य, सः चार्वाकः**	चार्वाक सिद्धांत चार तत्वों, 'पृथ्वी', 'जल', 'अग्नि', एवं 'वायु' को मान्यता देता है । समस्त जीव-निर्जीव तंत्र/पदार्थ इन्हीं के संयोग से बने हैं । स्थूल वस्तुओं/जीवों की रचना में 'आकाश' का भी कोई योगदान नहीं रहता है, अतः उसे यह पांचवें तत्व के रूप में नहीं स्वीकारता है ।चार्वाक दर्शन नास्तिकवादी एवं अनीश्वर-वादी है । इस दर्शन के अनुसार जो भी इंद्रियगम्य है, जिसके अस्तित्व का ज्ञान देख-सुनकर अथवा अन्य प्रकार से किया जा सकता है, वही वास्तविक है ।